तुलसी रामायण

1008 पंक्तियों में

(संक्षिप्त रामचरितमानस)

सम्पादक

ओमप्रकाश गुप्ता

श्री राम चरित भवन

ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

तुलसी रामायण

1008 पंक्तियों में

(संक्षिप्त रामचरितमानस)
हिन्दी अनुवाद सहित

सम्पादक
ओमप्रकाश गुप्ता

श्री राम चरित भवन, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

प्रकाशक

श्री राम चरित भवन
ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

Publisher

Shri Ram Charit Bhavan
12436 FM 1960 W. Pmb #140,
Houston, TX 77065

© 2022 तुलसीकृत रामचरितमानस के अंश को छोड़कर शेष प्रकाशक द्वारा सर्वाधिकार सुरक्षित

द्वितीय संस्करण 2022

ISBN: 978-1-7362088-4-7

पुस्तक के समस्त अधिकार सम्पादक के पास सुरक्षित हैं। पुस्तक या उसके किसी भी अंश का पुनर्प्रस्तुतिकरण किसी भी माध्यम से स्वीकार्य नहीं होगा। चाहे यांत्रिक माध्यम हो या इलेक्ट्रॉनिक। जानकारी का संचयन लिखित आज्ञा लिए बिना नहीं किया जाना चाहिए। केवल एक समीक्षक को समीक्षा में आंशिक उदधृत करने की छूट रहेगी।

समर्पण

यह संकलन मैं अपने दिवंगत पिता श्री कल्यानप्रसाद रामजीलाल अग्रवाल और माँ त्रिवेनी के चरणों में सादर समर्पित करता हूँ। वे प्रभु राम के सच्चे भक्त थे। यद्यपि वे अब हमारे बीच नहीं हैं, तथापि उनकी राम-भक्ति सदा प्रेरणा देती रही है।

ओमप्रकाश गुप्ता

विद्वानों के शब्द

गोस्वामी तुलसीदास ने रामचरितमानस के अंत में लिखा, "कहि नाम वारेक तेपि पावन होहिं राम नमामि ते" तथा "सत पंच चौपाई मनोहर जानि जो नर उर धरै" अर्थात् इसकी सात या पाच चौपाइयों, यहाँ तक कि जब कोई एक बार भी यदि राम का नाम हृदय में धारण करेगा तो श्री राम अविद्या जनित उसके विकार और पीड़ा दूर कर देंगे। इस उक्ति पर विचार करते हुये इसका एक आशय यह भी गृहण किया जा सकता है कि यह संख्या हमारी साधना परंपरा की शुभ संख्या 108 या 1008 भी हो सकती है। मुझे श्री ओम गुप्त जी की यह चेष्टा इसी दिशा में की गयी एक सिद्ध पहल प्रतीत होती है। स्वयं तुलसी बाबा के साक्ष्य और समर्थन पर आधारित यह सार संग्रह लोकोपकार करे, ऐसी मेरी कामना है।

प्रभुदयाल मिश्र, अध्यक्ष महर्षि अगस्त्य वैदिक संस्थानम्, भोपाल, भारत

रामायण प्रेमियों के लिए बहुमूल्य साधना यन्त्र - कुछ ही घंटों में पारायण करने की व्यवस्था।

उषा मेहरा, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

ओम गुप्ता जी ने कई वर्षों से अपने जीवन को श्री राम महिमा को जानने, मानने, पहचानने और उच्चारने में अर्पित किया हुआ है। प्रस्तुत 'तुलसी रामायण 1008 पंक्तियों में' पुस्तक में उन्होंने बहुत अध्ययन और मनन के बाद पूरी राम कथा को कह देने वाली मनोहर पंक्तियों का चयन किया है। युवाओं और रामचरितमानस के अध्ययन की ओर पहली बार उत्सुक हुए लोगों को इस पुस्तक से निःसन्देह तुलसी और उनके श्री राम के महान स्वरूप के दर्शन सरलता से होंगे। यह पुस्तक स्वयंसिद्ध यशस्वी है। मैं ओम गुप्ता जी के समर्पण भाव और उनके रामचरितमानस प्रेम को सादर नमन करती हूँ।

डॉ. शैलजा सक्सेना, कैनेडा

राम भक्ति को पूर्णतः समर्पित और उसका पूरा आनंद लेते व देते ह्यूस्टन निवासी श्री ओमप्रकाश गुप्ता जी द्वारा संकलित मात्र 1008 पंक्तियों की रामायण निश्चय ही आधुनिक समय में 'इन्सटैंट फूड' की तरह ही अति सुविधाजनक व सुपाच्य है युवा पीढ़ी के लिए, जो रामायण से परिचित तो होना चाहती है परन्तु उनके पास समय नहीं है। सार्थक, विवेकी और सुनियोजित अर्थसहित इस संक्षिप्त रामायण की भूरि-भूरि प्रशंसा और हार्दिक स्वागत!

शैल अग्रवाल, बरमिंघम, यू.के.

रामचरितमानस न केवल आध्यात्मिक दृष्टि से वरन काव्य की दृष्टि से भी विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृति है जो हमारे जीवन को सँवारती तथा आशाओं को पल्लिवत करती है। डॉ. ओमप्रकाश गुप्ता जी द्वारा सम्पादित यह पुस्तक अनेक भाँति से महत्वपूर्ण है। यह न केवल मानस के शोधार्थियों तथा रामकथा के रसिकों के लिए रोचक और प्रासंगिक रहेगी, अपितु अहिन्दी तथा अभारतीय पाठकों को यह मूल रामचरितमानस पढ़ने के लिए प्रेरित करेगी। मानस की 12503 पंक्तियों में से 1008 पंक्तियों का चयन एक कठिन श्रमसाध्य कार्य था। छंदविधान यथा- दोहा, सोरठा, चौपाई, छंद आदि का साम्य भी मानस के अनुरूप ही रखना था। साथ ही यह चुनौती भी कि मानस की मूलकथा का उत्स भी अपने स्वाभाविक रूप में प्रकट हो सके। डॉ गुप्ता ने बहुत कुशलता के साथ सभी पक्षों का समन्वय करते हुए इस पुस्तक का सम्पादन किया है। इस सुन्दर एवं महत्वपूर्ण पुस्तक की अनन्य विशेषता यह भी है कि सरल हिंदी अनुवाद भी साथ ही दिया गया है जो काव्य के भाव तक पहुँचने में सहायक होगा। मैं आदरणीय गुप्ता जी इस अनुपम कृति के लिए कोटिशः साधुवाद देता हूँ।

डॉ राजेश श्रीवास्तव
निदेशक - रामायण केंद्र भोपाल
मुख्य कार्यपालन अधिकारी, म.प्र. तीर्थ एवं मेला प्राधिकरण, म.प्र. शासन, भोपाल

आमुख

जे एहि कथहि सनेह समेता। कहिहहिं सुनिहहिं समुझि सचेता॥
होइहहिं राम चरन अनुरागी। कलि मल रहित सुमंगल भागी॥

(मानस 1.15.C10-C11)

गोस्वामी तुलसीदास जी विरचित महाकाव्य "रामचरितमानस" जिसके प्रादुर्भाव की चार सौ पचासवीं वर्षगाँठ सन् 2023 में मनाई जाएगी, विश्व साहित्य के खजाने में एक परम उज्जवल मणि है। इस पर भी यह सैकड़ों वर्षों व अनगिनत करोड़ों भक्तों से न केवल उत्तम धार्मिक सद्ग्रन्थ बल्कि जीवन-गुरु और प्रेरणा-स्रोत के रूप में सम्मानित तथा पूजित रहा है। कई वर्षों से ह्यूस्टन निवासी श्री ओमप्रकाश गुप्ता ने पत्रिकाओं, पुस्तकों, और विद्वान-सम्मेलनों के माध्यम से रामायण-प्रचार तथा तुलसी मानस के विवेचन के कार्य में बड़ा योगदान किया है। अब आधुनिक पाठकों की सुविधा और आवश्यकताओं को सोच कर उन्होंने बड़े ध्यान और परिश्रम से 1008 पंक्तियों में यह मानस-सार संकलन तैयार किया है जो अब हिन्दी रामायण प्रेमियों को सादर प्रस्तुत है। गोस्वामी तुलसीदास जी ने स्वयं कहा है, "रामायन सत कोटि अपारा" (रामायण की परम्परा में सौ करोड़ तथा अपार रामायण हैं), और मैं आशा करता हूँ कि पाठक व भक्त लोग आनन्दित हो कर रामायण की अपार परम्परा में इस नये संक्षिप्त मानस-रामायण का भी स्वागत और रसास्वादन करेंगे।

फ़िलिप लटगेण्डोर्फ़
प्राध्यापक, हिन्दी तथा भारतीय साहित्य व संस्कृति (भूतपूर्व)
आयोवा विश्वविद्यालय (आयोवा सिटी, आयोवा, यू० एस० ए०)
अनुवादकार, "द एपिक ऑफ राम" (रामचरितमानस),
मूर्ति क्लैसिकल लाइब्रेरी ऑफ इण्डिया (हार्वर्ड युनिवर्सिटी प्रेस)

प्रस्तावना

सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरै।
दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै॥

(मानस 7.130.X15-X16)

जो मनुष्य पाँच-सात चौपाइयों को भी अपने हृदय में धारण करता है, उसको पाँच प्रकार की अविद्याओं से उत्पन्न विकारों से श्री रामजी मुक्त कर देते हैं।

रामचरितमानस के अंत में गोस्वामी जी ने उपर्युक्त उद्धृत दो पंक्तियाँ लिखी हैं। विद्वानों ने इन पंक्तियों का, विशेष रूप से 'सत पंच' का अर्थ अपनी-अपनी मति के अनुसार निकाला है। 'सत पंच' के अनेक अर्थों में से प्रचलित एक अर्थ है: सात-पाँच। तुलसीदास जी शायद कह रहे हैं कि यदि कोई व्यक्ति मानस की पाँच-सात पंक्तियों को भी हृदय में धारण करता है, वह सारे दोषों से मुक्त हो जाता है। उन्हें इस बात का अनुमान रहा होगा कि आने वाले समय में लोगों को कदाचित सम्पूर्ण रामचरितमानस पढ़ने का समय न मिले, अतः उन्होंने मात्र पाँच-सात पंक्तियों को जीवन में उतारने की बात कही होगी।

गोस्वामी जी की इन पंक्तियों से प्रेरित होकर और यह सोचकर कि आज हमारा जीवन कितना व्यस्त है, मुझे ऐसा लगा कि मानस का एक संक्षिप्त रूप यदि उपलब्ध हो तो आधुनिक समाज और आने वाले पीढ़ी के लिए शायद उपयोगी बन पड़े। इस विचार के परिणाम स्वरुप आप की सेवा में 'तुलसी रामायण 1008 पंक्तियों में' प्रस्तुत है। गीता प्रेस से प्रकाशित रामचरितमानस में 12,503 पंक्तियाँ हैं (इसमें संस्कृत में लिखे हुए श्लोकों की पंक्तियों की गणना शामिल नहीं है)। अतः प्रस्तुत संक्षिप्त मानस मूल पुस्तक का करीब 8 प्रतिशत ही है। इस संक्षिप्त रामायण में 121 दोहे, 15 सोरठे और 708 चौपाईयाँ हैं। शेष 28 पंक्तियाँ अन्य छंदों से हैं। आशा है कि पाठक अपने व्यस्त जीवन से इसे पढ़ने का समय निकाल पायेंगे। मानस से संकलित 1008 पंक्तियों के अतिरिक्त इस पुस्तक में उनका सरल हिंदी अनुवाद भी दिया गया है। पुस्तक के अंत में श्री रामायण जी की आरती, श्री राम-स्तुति व पुस्तक में आए विभिन्न पात्रों का संक्षिप्त विवरण भी है।

रामचरितमानस का हर शब्द लाखों-करोड़ों बार लिखा, पढ़ा, और बोला गया है। अतः हर शब्द अपने आप में एक मंत्र-सा बन गया है। लाखों शब्दों और हजारों पंक्तियों में से मात्र कुछ पंक्तियों का संकलन कैसे किया जाए यह अपने आप में एक चुनौती रही। संकलन करते हुए निम्न बातों का विशेष ध्यान रखा गया।

1. मानस कथा की घटनाओं का सातत्य बना रहे।
2. यथासंभव मुख्य घटनाओं का संक्षेप में ही सही, पर उल्लेख अवश्य हो।
3. प्रसंगों की आपसी संबद्धता व कथा की सततता बनी रहे।
4. हर 7-8 चौपाईयों के बाद एक दोहा अथवा सोरठा हो।
5. यदि कहीं छंद (दोहा, चौपाई, सोरठा के अतिरिक्त) का प्रयोग हुआ हो तो उसके तुरंत बाद एक दोहा/सोरठा आए।

विद्वान पाठकों से मेरी करबद्ध प्रार्थना है कि वे इस संक्षिप्त रामायण को गोस्वामी जी द्वारा रचित रामचरितमानस का पर्याय कदापि न समझें। मैं नहीं मानता कोई भी रचना रामचरितमानस का स्थान ले सकती है। मेरी एक मात्र आशा है कि आप इस संक्षिप्त रामायण से प्रेरणा लेकर सम्पूर्ण रामचरितमानस पढ़ने का आनंद अवश्य लेंगे। इस पुस्तक से आपके मन में प्रभु राम की जीवन-गाथा को विस्तार से जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हो यही इस पुस्तक का मुख्य उद्देश्य है।

यह मेरा सौभाग्य है कि प्रभु राम ने मुझे मानस का संक्षिप्त रामायण संकलन करने के लिए प्रेरित किया। अगर तुलसी-बाबा न होते, तो रामचरितमानस भी नहीं होती, बाबा आपको कोटि-कोटि प्रणाम! मैं आयोवा विश्वविद्यालय के (भूतपूर्व) प्रोफेसर फ़िलिप लटगेण्डोर्फ़ का आभार कैसे प्रकट करूँ, वे तो मेरे रामायण गुरु हैं। जब भी मेरे मन में कोई प्रश्न उठता है, मैं उन्हें नि:संकोच पूछता हूँ, और वे शीघ्र ही एक सद्गुरु की भाँति मेरा मार्गदर्शन करते हैं। मैं आदरणीय भाई श्री सत्य देव जी, जो स्वयं रामायण के प्रकाण्ड विद्वान हैं, का विशेष ऋणी हूँ। इस संकलन के पहले प्रारूप की हर पंक्ति को पढ़कर उन्होंने अनेक अमूल्य सुझाव दिए। मैं पंडित प्रभुदयाल मिश्र, भाई श्री रामलक्ष्मण गुप्त, डॉ॰ राम गोपाल सिंह, श्रीमती उषा मेहरा, डॉ॰ आरती 'लोकेश', श्री निरंजन शर्मा, प्रो. ज्ञानप्रकाश शास्त्री, सुश्री विनीता मिश्रा, श्रीमती अलका प्रमोद और अनेक मित्रों और हितैषियों का अत्यंत आभारी हूँ जिनके

अथाह सहयोग से यह यज्ञ पूरा हुआ। मैं भाई श्री बलराम ठकराल जी का विशेष उल्लेख करना चाहूँगा जिन्होंने हिन्दी व अंग्रेजी के प्रारूप को बार-बार पढ़ा और हर बार अमूल्य सुझाव दिए। मैं इस यज्ञ में उन्हें बराबर का सहभागी समझता हूँ।

अपने अनुज डॉ॰ शिवप्रकाश अग्रवाल के विषय में क्या कहूँ, जो लक्ष्मण की भाँति अपने अग्रज के हर कार्य के लिए सदा तत्पर रहते हैं। प्रिय शिव, प्रभु राम तुम्हें सदैव प्रसन्न रखें।

अंत में, साकेतवासी माता-पिता और सभी गुरुओं के चरण कमलों को सादर प्रणाम करता हूँ जिनके आशीर्वाद के बिना मेरे जीवन में कुछ भी संभव नहीं। यद्यपि पूरा प्रयास रहा है कि पुस्तक में त्रुटियाँ न रहें, तथापि जो भी त्रुटियाँ रह गई हों उनके लिए मैं अकेला ही दोषी हूँ, अत: क्षमाप्रार्थी हूँ। 'तुलसी रामायण 1008 पंक्तियों में' पर आपकी टिप्पणी की प्रतीक्षा रहेगी। जय सिया राम।

ओमप्रकाश गुप्ता
श्री राम चरित भवन, ह्यूस्टन
तुलसी जयंती, सम्वत 2078

मानस की पंक्तियों की अवस्थिति की संकेत व्यवस्था

मानस की प्रत्येक पंक्ति को एक अनन्य संकेत प्रदान किया गया है ताकि उसे सरलता से इंगित किया जा सके। इस संकेत के तीन भाग हैं। पहला भाग काण्ड क्रम, दूसरा दोहा/सोरठा क्रमांक और तीसरा पंक्ति क्रमांक तथा छंद का प्रकार बताता है।

काण्ड क्रम संकेत

1. बालकांड 2. अयोध्याकाण्ड 3. अरण्यकाण्ड 4. किष्किन्धाकाण्ड
5. सुन्दरकाण्ड 6. लंकाकाण्ड 7. उत्तरकाण्ड

छंद प्रकार संकेत

D दोहा, S सोरठा, C चौपाई, X छंद

उदाहरण:

1. सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥ 1.8.C2
   यह पंक्ति बालकाण्ड में दोहा 7 और 8 के बीच है। यह दोहा 7 के बाद दूसरी पंक्ति है और एक चौपाई है।
2. सिंह ठवनि इत उत चितव धीर बीर बल पुंज॥ 6.18.D2
   यह पंक्ति लंकाकाण्ड में 18वें दोहे की दूसरी पंक्ति है।
3. प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन। 1.17.S1
   यह पंक्ति बालकाण्ड में 17वें सोरठे की पहली पंक्ति है।
4. सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरै। 7.130.X15
   यह पंक्ति उत्तरकाण्ड में दोहा 129 और 130 के बीच में है। यह दोहा 129 के बाद के बाद 15वीं पंक्ति है और छंद है।

तुलसी मानस महिमा

होते नहीं तुलसी अगर, नहीं राम को मैं जानता।
सम्मुख खड़े रहते प्रभु, फिर भी नहीं पहचानता॥

मंथन वेदों का किया, मानस-मणि जग को दिया।
तुलसी-कृपा से प्रभु मिले, अर्धांगिनी जिनकी सिया॥

सहस्त्र-अष्ट पंक्ति से, है सार मानस का रचा।
धन्य मानूँ स्वयं को, यदि आपको कुछ है जँचा॥

बन पड़ा अच्छा जो प्रभु, बस आपका प्रसाद है।
हर कमी-त्रुटि के लिए, मन में सहज विषाद है॥

'ओम' चरणों में पड़ा, प्रभु भक्ति मुझको दीजिए।
तुलसी-पथ पर चल पड़ूँ, कृपा मुझ पर कीजिए॥

बालकाण्ड

1 जो सुमिरत सिधि होइ गन नायक करिबर बदन। 1.0a.S1
2 करउ अनुग्रह सोइ बुद्धि रासि सुभ गुन सदन॥ 1.0a.S2

जिनको स्मरण करने से सारे कार्य सफल होते हैं, जो गणों के नायक और सुन्दर हाथी के मुखवाले हैं, ऐसे बुद्धि के भण्डार और शुभ गुणों के धाम गणेश महाराज मुझ पर कृपा करें।

3 मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन। 1.0b.S1
4 जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन॥ 1.0b.S2

जिनकी कृपा से गूँगा बोलने लगता है, लँगड़ा दुर्गम पर्वत पर चढ़ जाता है, वे कलियुग के सब पापों को जला डालने वाले दयालु भगवान मुझ पर दया करें।

5 नील सरोरुह स्याम तरुन अरुन बारिज नयन। 1.0c.S1
6 करउ सो मम उर धाम सदा छीरसागर सयन॥ 1.0c.S2

जो नीले कमल के समान श्याम हैं, जिनके पूर्ण खिले हुए लाल कमल जैसे नेत्र हैं, जो सदा क्षीरसागर में शयन करते हैं, वे परमपिता श्री नारायण मेरे हृदय में निवास करें।

7 कुंद इंदु सम देह उमा रमन करुना अयन। 1.0d.S1
8 जाहि दीन पर नेह करउ कृपा मर्दन मयन॥ 1.0d.S2

जिनका कुंद के पुष्प और चन्द्रमा के समान गोरा शरीर है, जो पार्वती के प्रियतम और दया के धाम हैं, जिनका दीनों पर स्नेह है, कामदेव का मर्दन करनेवाले ऐसे शंकर भगवान मुझ पर कृपा करें।

9 बंदउँ गुरु पद कंज कृपा सिंधु नररूप हरि। 1.0e.S1
10 महामोह तम पुंज जासु बचन रबि कर निकर॥ 1.0e.S2

मैं श्री गुरु के चरणों की वंदना करता हूँ, जो कृपा के समुद्र और मनुष्य रूप में श्री हरि ही हैं। उनके वचन महामोह रूपी घनघोर अंधकार के नाश के लिए सूर्य की किरणों के समूह हैं।

11 सीय राममय सब जग जानी। करउँ प्रनाम जोरि जुग पानी॥ 1.8.C2
12 करन चहउँ रघुपति गुन गाहा। लघु मति मोरि चरित अवगाहा॥ 1.8.C5
सारे जग में श्री सीता राम व्याप्त हैं यह जानकर, मैं दोनों हाथ जोड़कर सबको प्रणाम करता हूँ। मैं रघुनाथ जी के गुणों का वर्णन करना चाहता हूँ, किन्तु मेरी बुद्धि बहुत छोटी और उनका चरित्र अथाह है।

13 एहि महँ रघुपति नाम उदारा। अति पावन पुरान श्रुति सारा॥ 1.10.C1
14 मंगल भवन अमंगल हारी। उमा सहित जेहि जपत पुरारी॥ 1.10.C2
इस कथा में रघुनाथ जी का उदार नाम है, जो अत्यंत पवित्र है, वेद-पुराणों का सार है। उनका नाम मंगल का भवन है और अमंगल को हरनेवाला है। उमा सहित शिव जी सदा उनका जाप करते रहते हैं।

15 प्रनवउँ पवनकुमार खल बन पावक ग्यान घन। 1.17.S1
16 जासु हृदय आगार बसहिं राम सर चाप धर॥ 1.17.S2
मैं पवनपुत्र हनुमान जी को प्रणाम करता हूँ, जो दुष्टरूपी वन को भस्म करने के लिए अग्नि के समान हैं। वे ज्ञान से परिपूर्ण हैं और उनके हृदय-मंदिर में धनुष-बाण धारण करने वाले प्रभु राम बसते हैं।

17 सादर सिवहि नाइ अब माथा। बरनउँ बिसद राम गुन गाथा॥ 1.34.C3
18 संबत सोरह सै एकतीसा। करउँ कथा हरि पद धरि सीसा॥ 1.34.C4
अब मैं सादर शिव जी को सिर नवाकर श्री राम के गुणों से परिपूर्ण निर्मल कथा कहता हूँ। श्री हरि के चरणों में अपना सिर रखकर संवत् 1631 में इस कथा का आरम्भ करता हूँ।

19 नौमी भौम बार मधुमासा। अवधपुरीं यह चरित प्रकासा॥ 1.34.C5
20 रामचरितमानस एहि नामा। सुनत श्रवन पाइअ बिश्रामा॥ 1.35.C7

चैत्र मास की नवमी तिथि, मंगलवार के दिन, अयोध्या में यह चरित्र प्रकाशित हुआ। इसका नाम 'रामचरितमानस' है। इस चरित्र को सुनने मात्र से श्रोताओं को शांति मिलती है।

21 रामचरितमानस मुनि भावन। बिरचेउ संभु सुहावन पावन॥ 1.35.C9
22 रचि महेस निज मानस राखा। पाइ सुसमउ सिवा सन भाषा॥ 1.35.C11
मुनियों के प्रिय इस सुहावने और पवित्र रामचरितमानस की रचना शिव जी ने की है। यह ग्रंथ ऋषि-मुनियों को अत्यधिक प्रिय है। भगवान शिव ने रचकर इसे पहले अपने मन में रखा और उचित अवसर आने पर पार्वती को सुनाया।

23 तातें रामचरितमानस बर। धरेउ नाम हियँ हेरि हरषि हर॥ 1.35.C12
24 कहउँ कथा सोइ सुखद सुहाई। सादर सुनहु सुजन मन लाई॥ 1.35.C13
शिव जी ने अपने हृदय में विचारकर और प्रसन्न होकर इसका सुन्दर 'रामचरितमानस' नाम रखा। मैं इसी सुखदायक तथा सुहावनी कथा को कहता हूँ। हे सज्जनो! आप आदरपूर्वक मन लगाकर सुनिए।

25 मंगल भवन अमंगल हारी। द्रवउ सो दसरथ अजिर बिहारी॥ 1.112.C4
मंगल के भवन और अमंगल को हरनेवाले, महाराज दशरथ के आँगन में खेलनेवाले, प्रभु राम मुझ पर कृपा करें।

26 अवधपुरीं रघुकुलमनि राऊ। बेद बिदित तेहि दसरथ नाऊँ॥ 1.188.C7
एक बार अवधपुरी में रघुकुल शिरोमणि दशरथ नाम के राजा हुए, जिनका नाम वेदों में भी प्रसिद्ध है।

27 कौसल्यादि नारि प्रिय सब आचरन पुनीत। 1.188.D1
28 पति अनुकूल प्रेम दृढ़ हरि पद कमल बिनीत॥ 1.188.D2
कौसल्या आदि उनकी सभी प्रिय रानियाँ पवित्र आचरण करनेवाली थीं। वे बड़ी विनीत और पति के अनुकूल व्यवहार करती थीं और उन्हें श्री हरि के चरणों में दृढ़ प्रेम था।

29 एक बार भूपति मन माहीं। भै गलानि मोरें सुत नाहीं॥ 1.189.C1
एक बार राजा के मन में बड़ी ग्लानि हुई कि मेरे पुत्र नहीं है।

30 निज दुख सुख सब गुरहि सुनायउ। कहि बसिष्ठ बहुबिधि समुझायउ॥1.189.C3
31 धरहु धीर होइहहिं सुत चारी। त्रिभुवन बिदित भगत भय हारी॥ 1.189.C4
उन्होंने अपना दु:ख-सुख गुरु वसिष्ठ को सुनाया। गुरु ने उन्हें कई तरह से समझाकर कहा, "हे राजन्! धैर्य रखिए, आपके चार पुत्र होंगे, जो तीनों लोकों में प्रसिद्ध और भक्तों के भय को दूर करनेवाले होंगे।"

32 सृंगी रिषिहि बसिष्ठ बोलावा। पुत्रकाम सुभ जग्य करावा॥1.189.C5
33 एहि बिधि गर्भसहित सब नारी। भईं हृदयँ हरषित सुख भारी॥1.190.C5
फिर मुनि वसिष्ठ ने श्रृंगी ऋषि को बुलवाकर महाराज दशरथ से शुभ पुत्रकामेष्टि यज्ञ करवाया। परिणामस्वरुप सारी रानियाँ गर्भवती होकर हृदय में बहुत हर्षित हुईं, जिससे उन्हें बड़ा सुख मिला।

34 नौमी तिथि मधु मास पुनीता। सुकल पच्छ अभिजित हरिप्रीता॥ 1.191.C1
35 मध्यदिवस अति सीत न घामा। पावन काल लोक बिश्रामा॥ 1.191.C2
पवित्र चैत्र माह के शुक्ल पक्ष की नवमी तिथि के दिन दोपहर का समय था, जो भगवान का प्रिय अभिजित मुहूर्त्त है। उस समय न तो बहुत सर्दी थी, न ही गरमी। वह पवित्र समय सब लोकों को शांति देने वाला था।

36 भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी। 1.192.X1
37 हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी॥ 1.192.X2
38 लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुज चारी। 1.192.X3
39 भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी॥ 1.192.X4
इस बेला में दीन-दुखियों पर दया करनेवाले तथा माता कौसल्या का हित चाहनेवाले कृपालु प्रभु प्रकट हुए। ऋषि-मुनियों के मन को हरने वाले अद्भुत रूप को देखकर माता बड़ी हर्षित हुईं। बादलों जैसा उनका श्याम शरीर नेत्रों को आनंद देने वाला था। उनकी चारों भुजाएँ अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित थीं, वे आभूषण और

वनमाला पहने हुए थे, उनके विशाल नेत्र थे। इस प्रकार शोभा के सागर तथा खर राक्षस को मारनेवाले भगवान प्रकट हुए।

40 बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार। 1.192.D1
41 निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार॥ 1.192.D2

ब्राह्मण, गाय, देवता और संतों के लिए भगवान ने मनुष्य के रूप में अवतार लिया। उनका शरीर उनकी अपनी इच्छा से बना है। वे स्वयं माया, गुण और इंद्रियों से परे हैं।

42 दसरथ पुत्रजन्म सुनि काना। मानहुँ ब्रह्मानंद समाना॥ 1.193.C3
43 जाकर नाम सुनत सुभ होई। मोरें गृह आवा प्रभु सोई॥ 1.193.C5

महाराज दशरथ पुत्र जन्म के समाचार सुनकर मानो ब्रह्मानंद में समा गए और मन में विचार करने लगे कि जिनका नाम सुनने से ही कल्याण होता है, वही प्रभु मेरे घर आए हैं।

44 कैकयसुता सुमित्रा दोऊ। सुंदर सुत जनमत भैं ओऊ॥ 1.195.C1

उनकी अन्य पत्नियों कैकेयी और सुमित्रा ने भी सुन्दर पुत्रों को जन्म दिया।

45 नामकरन कर अवसरु जानी। भूप बोलि पठए मुनि ग्यानी॥ 1.197.C2
46 सो सुखधाम राम अस नामा। अखिल लोक दायक बिश्रामा॥ 1.197.C6

कुछ समय बाद नामकरण के अवसर पर राजा दशरथ ने ज्ञानी मुनि वसिष्ठ को आमंत्रित किया। गुरु वसिष्ठ बोले, "जो सुख के धाम और सारे लोकों को शांति देनेवाले हैं, उनका नाम 'राम' है।"

47 बिस्व भरन पोषन कर जोई। ताकर नाम भरत अस होई॥ 1.197.C7
48 जाके सुमिरन तें रिपु नासा। नाम सत्रुहन बेद प्रकासा॥ 1.197.C8

"जो संसार का भरण-पोषण करते हैं, उनका नाम 'भरत' होगा। जिनके स्मरण मात्र से शत्रु का नाश होता है, जो वेदों में प्रसिद्ध हैं, उनका नाम 'शत्रुघ्न' होगा।"

49 लच्छन धाम राम प्रिय सकल जगत आधार। 1.197.D1
50 गुरु बसिष्ट तेहि राखा लछिमन नाम उदार॥ 1.197.D2
जो शुभ लक्षणों के धाम, राम के अति प्रिय और समस्त विश्व के आधार और अत्यंत उदार हैं, गुरु वसिष्ठ ने उनका नाम 'लक्ष्मण' रखा।

51 बारेहि ते निज हित पति जानी। लछिमन राम चरन रति मानी॥ 1.198.C3
52 भरत सत्रुहन दूनउ भाई। प्रभु सेवक जसि प्रीति बड़ाई॥ 1.198.C4
बचपन से ही राम को अपना हितैषी और स्वामी जानकर लक्ष्मण ने उनके चरणों में प्रीति लगाई। भरत और शत्रुघ्न दोनों भाइयों में, स्वामी और सेवक के जिस प्रेम की प्रशंसा है, वैसा ही प्रेम हो गया।

53 बालचरित हरि बहुबिधि कीन्हा। अति अनंद दासन्ह कहँ दीन्हा॥ 1.203.C1
54 कछुक काल बीतें सब भाई। बड़े भए परिजन सुखदाई॥ 1.203.C2
राम ने बहुत प्रकार से बाल-लीलाएँ कीं और अपने सेवकों को अत्यंत आनंद दिया। इस प्रकार कुछ समय बीतने पर चारों भाई बड़े होकर अपने कुटुम्बियों को सुख देनेवाले हुए।

55 भए कुमार जबहिं सब भ्राता। दीन्ह जनेऊ गुरु पितु माता॥ 1.204.C3
56 गुरगृहँ गए पढ़न रघुराई। अलप काल बिद्या सब आई॥ 1.204.C4
कुमार अवस्था आने पर गुरु, पिता और माता ने उनका यज्ञोपवीत संस्कार किया। राम गुरु वसिष्ठ के आश्रम में पढ़ने गए और कुछ ही समय में उन्होंने सारी विद्याएँ सीख लीं।

57 कोसलपुर बासी नर नारि बृद्ध अरु बाल। 1.204.D1
58 प्रानहु ते प्रिय लागत सब कहुँ राम कृपाल॥ 1.204.D2
कोसलपुर के पुरुष, स्त्री, वृद्ध और बच्चों को कृपालु रघुनाथ अपने प्राणों से अधिक प्रिय लगते हैं।

59 बिस्वामित्र महामुनि ग्यानी। बसहिं बिपिन सुभ आश्रम जानी॥ 1.206.C2
60 जहँ जप जग्य जोग मुनि करहीं। अति मारीच सुबाहुहि डरहीं॥ 1.206.C3

वन में विश्वामित्र नाम के एक महान ज्ञानी मुनि का पवित्र आश्रम था। वहाँ ऋषि-मुनि जप, यज्ञ और योग आदि किया करते थे, किन्तु वे मारीच और सुबाहु नाम के राक्षसों से बहुत डरते थे।

61 देखत जग्य निसाचर धावहिं। करहिं उपद्रव मुनि दुख पावहिं॥ 1.206.C4
62 गाधितनय मन चिंता ब्यापी। हरि बिनु मरहिं न निसिचर पापी॥ 1.206.C5
यज्ञ होते हुए देखकर राक्षस दौड़े आते और उपद्रव मचाते, जिससे मुनि दुखी होते। गाधि के पुत्र विश्वामित्र के मन में चिंता हुई कि ये पापी राक्षस हरि के बिना मारे नहीं मरेंगे।

63 तब मुनिबर मन कीन्ह बिचारा। प्रभु अवतरेउ हरन महि भारा॥ 1.206.C6
64 एहूँ मिस देखौं पद जाई। करि बिनती आनौं दोउ भाई॥ 1.206.C7
उनके मन में तब विचार आया कि प्रभु ने पृथ्वी का भार उतारने के लिए अवतार ले लिया है। वे सोचने लगे कि इसी बहाने जाकर मैं उनके चरणों के दर्शन करूँ और राजा से विनती करके दोनों भाइयों को यहाँ ले आऊँ।

65 बहुबिधि करत मनोरथ जात लागि नहिं बार। 1.206.D1
66 करि मज्जन सरऊ जल गए भूप दरबार॥ 1.206.D2
इस प्रकार बहुत सी इच्छाएँ करते हुए मुनिवर को जाने में कोई देर नहीं लगी और वे शीघ्र ही अयोध्या पहुँच गए। सरयू नदी में स्नान करके वे राजा दशरथ के दरबार में पहुँचे।

67 केहि कारन आगमन तुम्हारा। कहहु सो करत न लावउँ बारा॥ 1.207.C8
68 असुर समूह सतावहिं मोही। मैं जाचन आयउँ नृप तोही॥ 1.207.C9
महराज ने कहा, "हे मुनिवर! आप किस प्रयोजन से आए हैं? कहिए, मैं उसे पूरा करने में कोई देर नहीं करूँगा।" विश्वामित्र बोले, "हे राजन्! राक्षसों के समूह मुझे सताते रहते हैं, इसलिए मैं आपसे कुछ माँगने आया हूँ।"

69 अनुज समेत देहु रघुनाथा। निसिचर बध मैं होब सनाथा॥ 1.207.C10
70 सुनि राजा अति अप्रिय बानी। हृदय कंप मुख दुति कुमुलानी॥ 1.208.C1

"आप राम और उनके अनुज लक्ष्मण को मेरे साथ भेजिए। उनके हाथों राक्षसों के मारे जाने पर मैं सुरक्षित हो जाऊँगा।" मुनि के अत्यंत अप्रिय वचन सुनकर राजा का हृदय काँप गया, उनके मुख की कांति फीकी पड़ गई।

71 तब बसिष्ट बहुबिधि समुझावा। नृप संदेह नास कहँ पावा॥ 1.208.C8
72 अति आदर दोउ तनय बोलाए। हृदयँ लाइ बहु भाँति सिखाए॥ 1.208.C9
तब गुरु वसिष्ठ ने राजा दशरथ को बहुत प्रकार से समझाया, जिससे राजा के मन का संदेह दूर हो गया। राजा ने बड़े आदर से अपने दोनों पुत्रों को बुलाया और हृदय से लगाकर उन्हें बहुत प्रकार से समझाया।

73 पुरुषसिंह दोउ बीर हरषि चले मुनि भय हरन। 1.208b.S1
74 कृपासिंधु मतिधीर अखिल बिस्व कारन करन॥ 1.208b.S2
पुरुषों में सिंह के समान दोनों वीर मुनि का भय दूर करने के लिए प्रसन्न होकर चल पड़े। वे कृपा के सागर, धीर बुद्धिवाले और समस्त संसार के कारण के भी कारण हैं।

75 चले जात मुनि दीन्हि देखाई। सुनि ताड़का क्रोध करि धाई॥ 1.209.C5
76 एकहिं बान प्रान हरि लीन्हा। दीन जानि तेहि निज पद दीन्हा॥ 1.209.C6
रास्ते में मुनि ने ताड़का नाम की राक्षसी को दिखाया, जो क्रोधित होकर उन्हें मारने के लिए दौड़ पड़ी। राम ने एक ही बाण से उसके प्राण हर लिए और दीन जानकर उसे अपना पद दे दिया।

77 प्रात कहा मुनि सन रघुराई। निर्भय जग्य करहु तुम्ह जाई॥ 1.210.C1
आश्रम पहुँचने के बाद सुबह होने पर राम ने मुनि से कहा, "आप बिना किसी भय के यज्ञ करें।"

78 सुनि मारीच निसाचर क्रोही। लै सहाय धावा मुनिद्रोही॥ 1.210.C3
79 बिनु फर बान राम तेहि मारा। सत जोजन गा सागर पारा॥ 1.210.C4
यह समाचार सुनते ही ऋषि-मुनियों का शत्रु राक्षस मारीच क्रोधित होकर साथियों सहित वहाँ विघ्न डालने के लिए आ गया। राम ने बिना फल के बाण से उसे मारा, जिसके लगते ही वह सौ योजन (1 योजन = 8 मील) दूर सागर के पार जा गिरा।

80 पावक सर सुबाहु पुनि मारा। अनुज निसाचर कटकु सँघारा ॥ 1.210.C5
81 तहँ पुनि कछुक दिवस रघुराया। रहे कीन्हि बिप्रन्ह पर दाया ॥ 1.210.C7
फिर उन्होंने अग्निबाण से सुबाहु को मारा। उधर छोटे भाई लक्ष्मण ने राक्षसों की सेना का नाश कर दिया। कुछ दिन वहाँ रहकर राम ने ब्राह्मणों पर बड़ी कृपा की।

82 तब मुनि सादर कहा बुझाई। चरित एक प्रभु देखिअ जाई ॥ 1.210.C9
83 धनुषजग्य सुनि रघुकुल नाथा। हरषि चले मुनिबर के साथा ॥ 1.210.C10
कुछ समय बाद मुनि ने कहा, "हे प्रभु! धनुषयज्ञ का एक उत्सव देखने चलते हैं।" यह सुनकर राम और लक्ष्मण बड़ी प्रसन्नता से श्रेष्ठ मुनि विश्वामित्र के साथ चल पड़े।

84 आश्रम एक दीख मग माहीं। खग मृग जीव जंतु तहँ नाहीं ॥ 1.210.C11
85 पूछा मुनिहि सिला प्रभु देखी। सकल कथा मुनि कहा बिसेषी ॥ 1.210.C12
रास्ते में उन्हें एक आश्रम दिखाई दिया जहाँ पशु, पक्षी, जीव-जंतु नहीं थे। वहाँ पत्थर की एक शिला देखकर प्रभु ने उसके बारे में पूछा। मुनिवर ने तब इस विषय में विस्तृत जानकारी दी।

86 गौतम नारि श्राप बस उपल देह धरि धीर। 1.210.D1
87 चरन कमल रज चाहति कृपा करहु रघुबीर ॥ 1.210.D2
वे बोले, "गौतम मुनि की पत्नी अहल्या का शरीर शाप के कारण पत्थर का हो गया है। वह बड़े धैर्य से आपके चरणों की धूल चाहती है। हे रघुवीर! इस पर कृपा करें।"

88 परसत पद पावन सोक नसावन प्रगट भई तपपुंज सही। 1.211.X1
89 देखत रघुनायक जन सुखदायक सनमुख होइ कर जोरि रही ॥ 1.211.X2
प्रभु के पवित्र और शोकनाशक चरणों का स्पर्श पाते ही अहल्या एक तपोमूर्ति के रूप में प्रकट हो गई। अपने सामने विश्व को सुख देनेवाले रघुकुल के नायक रामचन्द्र जी को देखकर अहल्या हाथ जोड़कर खड़ी हो गई।

90 अति प्रेम अधीरा पुलक सरीरा मुख नहिं आवइ बचन कही। 1.211.X3
91 अतिसय बड़भागी चरनन्हि लागी जुगल नयन जलधार बही ॥ 1.211.X4

अत्यंत प्रेम के कारण वह अधीर हो गई। उसका शरीर पुलकित हो गया, उसके मुख से शब्द नहीं निकल पा रहे थे। बड़ी भाग्यवान अहल्या ने प्रभु के चरण स्पर्श किए, उसके दोनों नेत्रों से जल की धारा बहने लगी।

92 मैं नारि अपावन प्रभु जग पावन रावन रिपु जन सुखदाई। 1.211.X7
93 राजीव बिलोचन भव भय मोचन पाहि पाहि सरनहिं आई॥ 1.211.X8
वह प्रार्थना करने लगी, "हे प्रभु! मैं एक अपवित्र स्त्री हूँ, आप जगत को पवित्र करनेवाले हैं। आप रावण के शत्रु और लोगों को सुख देनेवाले हैं। हे कमलनयन! हे संसार के भय से छुड़ानेवाले! मैं आपकी शरण में हूँ, मेरी रक्षा करें! रक्षा करें!"

94 एहि भाँति सिधारी गौतम नारी बार बार हरि चरन परी। 1.211.X15
95 जो अति मन भावा सो बरु पावा गै पति लोक अनंद भरी॥ 1.211.X16
इस प्रकार बार-बार प्रभु राम के चरणों में गिरकर, मनचाहा वरदान पाकर, गौतम ऋषि की पत्नी अहल्या आनंदित होकर अपने पति के लोक चली गई।

96 अस प्रभु दीनबंधु हरि कारन रहित दयाल। 1.211.D1
97 तुलसिदास सठ तेहि भजु छाड़ि कपट जंजाल॥ 1.211.D2
प्रभु राम ऐसे दीनबंधु और बिना किसी कारण के दया करनेवाले हैं। तुलसीदास कहते हैं कि हे मूर्ख मन! सारे कपट-जंजाल को छोड़कर तू उनका ही भजन कर।

98 हरषि चले मुनि बृंद सहाया। बेगि बिदेह नगर निअराया॥ 1.212.C4
99 बिस्वामित्र महामुनि आए। समाचार मिथिलापति पाए॥ 1.214.C8
प्रसन्नता से चलते-चलते राम मुनियों के साथ शीघ्र ही जनकपुर के पास पहुँच गए। उधर मिथिलापति जनक को महामुनि विश्वामित्रके आने का समाचार मिला।

100 कीन्ह प्रनामु चरन धरि माथा। दीन्हि असीस मुदित मुनिनाथा॥ 1.215.C1
101 भए सब सुखी देखि दोउ भ्राता। बारि बिलोचन पुलकित गाता॥ 1.215.C7
राजा जनक मुनि से मिले और उनके चरणों में सिर रखकर प्रणाम किया। मुनियों के नाथ विश्वामित्र ने प्रसन्न होकर उन्हें आशीर्वाद दिया। दोनों भाइयों को देखकर सभी लोग सुखी हुए। उनके नेत्रों में जल भर आया और शरीर रोमांचित हो गए।

102 समय जानि गुर आयसु पाई। लेन प्रसून चले दोउ भाई॥ 1.227.C2
103 तेहि अवसर सीता तहँ आई। गिरिजा पूजन जननि पठाई॥ 1.228.C2
सुबह पूजा का समय होने पर, गुरु से अनुमति लेकर दोनों भाई फूल लेने के लिए चल पड़े। उसी समय सीता भी वहाँ आईं। उनकी माता ने उन्हें पार्वती-पूजन के लिए वहाँ भेजा था।

104 देखि सीय सोभा सुखु पावा। हृदयँ सराहत बचनु न आवा॥ 1.230.C5
105 लता ओट तब सखिन्ह लखाए। स्यामल गौर किसोर सुहाए॥ 1.232.C3
सीता का सौंदर्य देखकर राम को बड़ा सुख मिला। मन ही मन वे उसकी सराहना करते हैं, पर मुख से शब्द नहीं निकलते। तभी सखियों ने लता की ओट से सीता को भी सुंदर श्याम और गौरवर्ण राजकुमारों को दिखाया।

106 लताभवन तें प्रगट भे तेहि अवसर दोउ भाइ। 1.232.D1
107 निकसे जनु जुग बिमल बिधु जलद पटल बिलगाइ॥ 1.232.D2
तभी दोनों भाई लताओं में से ऐसे प्रकट हुए, जैसे दो निर्मल चन्द्रमा बादलों की परतों को चीरकर निकले हों।

108 सकुचि सीयँ तब नयन उघारे। सनमुख दोउ रघुसिंघ निहारे॥ 1.234.C3
109 गई भवानी भवन बहोरी। बंदि चरन बोली कर जोरी॥ 1.235.C4
तब सीता ने सकुचाते हुए अपनी आँखें खोलीं और सामने रघुकुल के दोनों सिंह राम और लक्ष्मण को देखा। सीता पुनः माँ पार्वती के मंदिर में गईं और उनके चरणों की वंदना करके हाथ जोड़कर कहा,

110 जय जय गिरिबरराज किसोरी। जय महेस मुख चंद चकोरी॥ 1.235.C5
111 जय गजबदन षडानन माता। जगत जननि दामिनि दुति गाता॥ 1.235.C6
"हे पर्वतों के राजा हिमाचल की पुत्री! हे महादेव शंकर के मुखरूपी चन्द्रमा की चकोरी! आपकी जय हो! हे हाथी के मुखवाले गणेश और छह मुखवाले कार्तिकेय की माता! हे जगत की जननी! हे बिजली की भाँति कांतिमय शरीरवाली! आपकी जय हो।"

112 मोर मनोरथु जानहु नीकें। बसहु सदा उर पुर सबही कें॥ 1.236.C3
113 सुनु सिय सत्य असीस हमारी। पूजिहि मन कामना तुम्हारी॥ 1.236.C7
"आप मेरा मनोरथ अच्छी तरह से जानती हैं, क्योंकि सबके हृदय में आपका सदा वास है।" सीता की प्रार्थना सुनकर माँ पार्वती ने कहा, "हमारे आशीर्वाद से तुम्हारे मन की इच्छा अवश्य पूर्ण होगी।"

114 मनु जाहिं राचेउ मिलिहि सो बरु सहज सुंदर साँवरो। 1.236.X9
115 करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो॥ 1.236.X10
116 एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली। 1.236.X11
117 तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मंदिर चली॥ 1.236.X12
"तुम्हारे मन को जो भा गया है, वह साँवला सुंदर वर तुम्हें सहज ही मिलेगा। वह करुणा का धाम है, सर्वज्ञ है, तुम्हारे शील और स्नेह को जानता है।" इस भाँति माँ पार्वती से आशीर्वाद सुनकर सीता और उनकी सखियाँ प्रसन्न हुईं। तुलसीदास कहते हैं, "माँ भवानी को बार-बार पूजकर सीता प्रसन्न मन से अपने महल को लौट गईं।"

118 जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि। 1.236.S1
119 मंजुल मंगल मूल बाम अंग फरकन लगे॥ 1.236.S2
माँ गौरी को अपने अनुकूल जानकर सीता के हृदय में जो हर्ष हुआ वह कहा नहीं जा सकता। सुंदर मंगलों के कारण उनके बायें अंग फड़कने लगे।

120 हृदयँ सराहत सीय लोनाई। गुर समीप गवने दोउ भाई॥ 1.237.C1
121 सुफल मनोरथ होहुँ तुम्हारे। रामु लखनु सुनि भए सुखारे॥ 1.237.C4
उधर दोनों भाई भी हृदय में सीता के सौंदर्य की सराहना करते-करते गुरु के समीप पहुँचे। गुरु ने भाइयों को आशीर्वाद दिया कि तुम्हारे मनोरथ सफल हों। राम और लक्ष्मण यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए।

122 पुनि मुनिबृंद समेत कृपाला। देखन चले धनुषमख साला॥ 1.240.C4
123 हरषे जनकु देखि दोउ भाई। मुनि पद कमल गहे तब जाई॥ 1.244.C4

फिर मुनियों के साथ राम धनुष यज्ञशाला देखने चले। महाराज जनक दोनों भाइयों को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने मुनि के चरणकमल पकड़ लिए और उन्हें रंगमंच की ओर ले गए।

124 सब मंचन्ह ते मंचु एक सुंदर बिसद बिसाल। 1.244.D1
125 मुनि समेत दोउ बंधु तहँ बैठारे महिपाल॥ 1.244.D2

वहाँ सारे मंचों में जो मंच सबसे सुंदर, उज्ज्वल और विशाल था, उस पर राजा ने मुनि और दोनों भाइयों को बैठाया।

126 बोले बंदी बचन बर सुनहु सकल महिपाल। 1.249.D1
127 पन बिदेह कर कहहिं हम भुजा उठाइ बिसाल॥ 1.249.D2

राजा जनक के भाटों ने यह शुभ घोषणा की, "हे राजाओं! हम अपनी भुजा उठाकर महाराज जनक के विशाल प्रण को कहते हैं।"

128 नृप भुजबलु बिधु सिवधनु राहू। गरुअ कठोर बिदित सब काहू॥ 1.250.C1

"राजाओं की भुजाओं का बल चन्द्रमा है तो शिव का धनुष राहु है, जो बहुत भारी और कठोर है, यह सबको मालूम है।"

129 सोइ पुरारि कोदंडु कठोरा। राज समाज आजु जोइ तोरा॥ 1.250.C3
130 त्रिभुवन जय समेत बैदेही। बिनहिं बिचार बरइ हठि तेही॥ 1.250.C4

"त्रिपुरारि शिव के इस कठोर धनुष को राजाओं के इस समाज में से जो कोई भी आज तोड़ेगा, तीनों लोकों की विजय के साथ ही, राजकुमारी सीता बिना किसी सोच-विचार के निश्चयपूर्वक उससे विवाह करेंगी।"

131 सुनि पन सकल भूप अभिलाषे। भटमानी अतिसय मन माखे॥ 1.250.C5
132 तमकि ताकि तकि सिवधनु धरहीं। उठइ न कोटि भाँति बलु करहीं॥ 1.250.C7

महाराज जनक का यह प्रण सुनकर सभी राजाओं के मन में सीता के साथ विवाह की इच्छा जाग उठी। वे वीर अभिमानी मन ही मन तमतमाने लगे। बड़े ताव से वे शिव के धनुष को देखते, निगाह जमाकर उसे पकड़ते, करोड़ों प्रकार से जोर लगाते, पर वह उनसे हिलता तक नहीं।

133 तमकि धरहिं धनु मूढ़ नृप उठइ न चलहिं लजाइ। 1.250.D1
134 मनहुँ पाइ भट बाहुबलु अधिकु अधिकु गरुआइ॥ 1.250.D2
मूर्ख राजा तमककर धनुष को पकड़ते हैं, पर जब वह नहीं उठता, वे लज्जित होकर चले जाते हैं। ऐसा लग रहा था कि वीरों की भुजाओं का बल पाकर धनुष और भारी होता जा रहा था।

135 नृपन्ह बिलोकि जनकु अकुलाने। बोले बचन रोष जनु साने॥ 1.251.C6
136 अब जनि कोउ माखै भट मानी। बीर बिहीन मही मैं जानी॥ 1.252.C3
राजाओं की यह दशा देख जनक जी अकुला उठे और क्रोधित होकर बोले, "अपनी वीरता पर गर्व करने वाला कोई वीर अब नाराज न हो। मैंने जान लिया है कि पृथ्वी पर अब कोई वीर रहा ही नहीं।"

137 रघुबंसिन्ह महुँ जहँ कोउ होई। तेहिं समाज अस कहइ न कोई॥ 1.253.C1
लक्ष्मण बोले, "जिस समाज में एक भी रघुवंशी हो, वहाँ ऐसी बात कोई नहीं कहता।"

138 लखन सकोप बचन जे बोले। डगमगानि महि दिग्गज डोले॥ 1.254.C1
139 सकल लोग सब भूप डेराने। सिय हियँ हरषु जनकु सकुचाने॥ 1.254.C2
उनकी क्रोधपूर्ण बातें सुनकर पृथ्वी डगमगाने लगी और दिशाओं के हाथी काँपने लगे। सारे लोग और राजा डर गए। सीता के हृदय में हर्ष हुआ और राजा जनक सकुचा गए।

140 बिस्वामित्र समय सुभ जानी। बोले अति सनेहमय बानी॥ 1.254.C5
141 उठहु राम भंजहु भवचापा। मेटहु तात जनक परितापा॥ 1.254.C6
तब शुभ समय जानकर विश्वामित्र अत्यंत स्नेह से बोले, "हे राम! उठो, शिवधनुष तोड़कर जनक का कष्ट मिटाओ।"

142 उदित उदय गिरि मंच पर रघुबर बालपतंग। 1.254.D1
143 बिकसे संत सरोज सब हरषे लोचन भृंग॥ 1.254.D2

तब मंचरूपी उदयगिरि पर रघुकुल में श्रेष्ठ राम बालसूर्य की तरह उदित हुए। यह दृश्य देखकर सब संतरूपी कमल खिल उठे और उनके भौंरें रूपी नेत्र हर्षित हो गए।

144 गुरहि प्रनामु मनहिं मन कीन्हा। अति लाघवँ उठाइ धनु लीन्हा॥ 1.261.C5
145 तेहि छन राम मध्य धनु तोरा। भरे भुवन धुनि घोर कठोरा॥ 1.261.C8
राम ने मन ही मन गुरु को प्रणाम किया और फिर अत्यंत फुर्ती से धनुष को उठा लिया। उन्होंने धनुष को उसी क्षण बीच से तोड़ डाला, जिसकी भयंकर ध्वनि से सारे लोक गूँज उठे।

146 सतानंद तब आयसु दीन्हा। सीताँ गमनु राम पहिं कीन्हा॥ 1.263.C8
147 गावहिं छबि अवलोकि सहेली। सियँ जयमाल राम उर मेली॥ 1.264.C8
तब गुरु शतानन्द की आज्ञा मिलने पर सीता राम के पास चलीं। उस सुंदर दृश्य को देखकर उनकी सहेलियाँ मधुर गीत गाने लगीं। सीता ने राम के गले में वरमाला पहना दी।

148 तेहिं अवसर सुनि सिवधनु भंगा। आयउ भृगुकुल कमल पतंगा॥ 1.268.C2
149 अति रिस बोले बचन कठोरा। कहु जड़ जनक धनुष कै तोरा॥ 1.270.C3
उस अवसर पर शिवधनुष का टूटना सुनकर भृगुकुलरूपी कमल के सूर्य परशुराम वहाँ आ पहुँचे। अत्यंत क्रोधित होकर वे कठोर वचन बोले, "अरे मूर्ख जनक! बता, यह धनुष किसने तोड़ा?"

150 अति डरु उतरु देत नृपु नाहीं। कुटिल भूप हरषे मन माहीं॥ 1.270.C5
राजा जनक अत्यंत डर गए, उन्हें कोई उत्तर नहीं सूझ पड़ा। यह देखकर वहाँ आए हुए दुष्ट राजा मन ही मन बड़े खुश हुए।

151 सभय बिलोके लोग सब जानि जानकी भीरु। 1.270.D1
152 हृदयँ न हरषु बिषादु कछु बोले श्रीरघुबीरु॥ 1.270.D2
जब राम ने लोगों को भयभीत और सीता को सहमा हुआ देखा। वे हृदय में बिना किसी प्रसन्नता अथवा दु:ख के बोले।

153 नाथ संभुधनु भंजनिहारा। होइहि केउ एक दास तुम्हारा॥ 1.271.C1
154 सुनहु राम जेहिं सिवधनु तोरा। सहसबाहु सम सो रिपु मोरा॥ 1.271.C4
"हे नाथ! शिव जी के इस धनुष को तोड़ने वाला आपका कोई एक दास ही होगा।" तब परशुराम बोले, "सुनो राम! जिसने भी यह शिवधनुष तोड़ा है, वह सहस्रबाहु के समान मेरा शत्रु है।"

155 सुनि मुनि बचन लखन मुसुकाने। बोले परसुधरहि अपमाने॥ 1.271.C6
156 बहु धनुहीं तोरीं लरिकाईं। कबहुँ न असि रिस कीन्हि गोसाईं॥ 1.271.C7
परशुराम की बात सुनकर लक्ष्मण मुस्कराए और अपमानजनक स्वर में बोले, "हे गोसाईं! हमने लड़कपन में ऐसे बहुतेरे छोटे-छोटे धनुषों को तोड़ डाला, किन्तु पहले तो आपने ऐसा क्रोध कभी नहीं किया।"

157 छुअत टूट रघुपतिहु न दोसू। मुनि बिनु काज करिअ कत रोसू॥ 1.272.C3
"यह धनुष तो छूते ही टूट गया, इसमें रघुनाथ जी का भला क्या दोष? हे मुनि! आप बिना किसी कारण क्रोध क्यों करते हैं?"

158 बोले चितइ परसु की ओरा। रे सठ सुनेहि सुभाउ न मोरा॥ 1.272.C4
159 बालकु बोलि बधउँ नहिं तोही। केवल मुनि जड़ जानहि मोही॥ 1.272.C5
परशुराम अपने फरसे की ओर देखकर बोले, "अरे शठ! लगता है तूने मेरे स्वभाव के बारे में नहीं सुना। मैं तुझे बालक समझकर नहीं मार रहा। अरे मूर्ख! क्या तू मुझे मात्र मुनि ही समझ रहा है?"

160 बिहसि लखनु बोले मृदु बानी। अहो मुनीसु महा भटमानी॥ 1.273.C1
161 पुनि पुनि मोहि देखाव कुठारू। चहत उड़ावन फूँकि पहारू॥ 1.273.C2
लक्ष्मण ने हँसकर कोमल वाणी से कहा, "अहो मुनिश्रेष्ठ! अरे, आप तो महान योद्धा निकले! बार-बार मुझे अपना फरसा ऐसे दिखा रहे हैं, जैसे फूँक से पहाड़ उड़ाना चाहते हैं।"

162 लखन उतर आहुति सरिस भृगुबर कोपु कृसानु। 1.276.D1
163 बढ़त देखि जल सम बचन बोले रघुकुलभानु॥ 1.276.D2

लक्ष्मण का यह उत्तर परशुराम के क्रोध की अग्नि में आहुति जैसा था। उनके क्रोध को बढ़ते देखकर रघुकुल के सूर्य रामचन्द्र ने शीतल जल के समान ये शांत वचन कहे।

164 सुनहु नाथ तुम्ह सहज सुजाना। बालक बचनु करिअ नहिं काना॥ 1.279.C2
165 बिप्रबंस कै असि प्रभुताई। अभय होइ जो तुम्हहि डेराई॥ 1.284.C5
"हे नाथ! आप तो स्वभाव से ही ज्ञानी हैं। आपको बच्चे की बात पर गौर नहीं करना चाहिए। विप्रवंश की ऐसी महिमा है कि जो आपसे डरता है, वह सबसे अभय हो जाता है।"

166 सुनि मृदु गूढ़ बचन रघुपति के। उघरे पटल परसुधर मति के॥ 1.284.C6
167 राम रमापति कर धनु लेहू। खैंचहु मिटै मोर संदेहू॥ 1.284.C7
रघुनाथ के कोमल किन्तु गूढ़ वचन सुनकर परशुराम की बुद्धि के परदे खुल गए। वे बोले, "हे राम! हे लक्ष्मीपति! मेरा यह धनुष हाथ में लीजिए और इसे खींचिए, जिससे मेरा संदेह मिट जाए।"

168 देत चापु आपुहिं चलि गयऊ। परसुराम मन बिसमय भयऊ॥ 1.284.C8
169 कहि जय जय जय रघुकुलकेतू। भृगुपति गए बनहि तप हेतू॥ 1.285.C7
जैसे ही वे धनुष राम के हाथ में देने लगे वह अपने आप ही चला गया। यह देखकर उनको बड़ा आश्चर्य हुआ और राम की जय-जयकार करते हुए तप के लिए वन को चले गए।

170 जनक कीन्ह कौसिकहि प्रनामा। प्रभु प्रसाद धनु भंजेउ रामा॥ 1.286.C5
171 मोहि कृतकृत्य कीन्ह दुहुँ भाईं। अब जो उचित सो कहिअ गोसाईं॥ 1.286.C6
तब राजा जनक ने मुनि विश्वामित्र को प्रणाम करके कहा, "आपकी कृपा से राम ने यह धनुष तोड़ा है। आज दोनों भाइयों ने मुझे कृतार्थ कर दिया। हे स्वामी! अब मुझे उचित आज्ञा दें।"

172 दूत अवधपुर पठवहु जाई। आनहिं नृप दसरथहि बोलाई॥ 1.287.C1
173 मुदित राउ कहि भलेहिं कृपाला। पठए दूत बोलि तेहि काला॥ 1.287.C2

मुनिवर बोले, "आप दूत को अयोध्या भेजकर महाराज दशरथ को बुलवाएँ।" राजा जनक ने प्रसन्न होकर कहा, "हे कृपालु! बहुत अच्छा!" और उसी समय अपने दूतों को अयोध्या भेज दिया।

174 पहुँचे दूत राम पुर पावन। हरषे नगर बिलोकि सुहावन॥ 1.290.C1
175 करि प्रनामु तिन्ह पाती दीन्ही। मुदित महीप आपु उठि लीन्ही॥ 1.290.C3
वे राम की पवित्र नगरी अयोध्या में पहुँचे और उस सुंदर नगर को देखकर बड़े प्रसन्न हुए। उन्होंने महाराज दशरथ को प्रणाम करके जनक जी का संदेश पत्र दिया, जिसे राजा ने बड़ी प्रसन्नता से स्वयं उठकर लिया।

176 तब उठि भूप बसिष्ट कहुँ दीन्हि पत्रिका जाइ। 1.293.D1
177 कथा सुनाई गुरहि सब सादर दूत बोलाइ॥ 1.293.D2
राजा ने उठकर वसिष्ठ जी को पत्रिका दी और दूतों को आदरपूर्वक बुलाकर उनसे सारी बातें सुनवाईं।

178 चढ़ि चढ़ि रथ बाहेर नगर लागी जुरन बरात। 1.299.D1
179 होत सगुन सुन्दर सबहि जो जेहि कारज जात॥ 1.299.D2
फिर गुरुदेव की अनुमति पाकर राजा के आदेश से नगर के बाहर विभिन्न रथों पर बारात सजने लगी। जो कोई जिस काम को करने के लिए जाता है, उसे सुंदर शकुन होते हैं।

180 सुरन्ह सुमंगल अवसरु जाना। बरषहिं सुमन बजाइ निसाना॥ 1.314.C1
181 प्रेम पुलक तन हृदयँ उछाहू। चले बिलोकन राम बिआहू॥ 1.314.C3
देवतागण सुमंगल अवसर जानकर नगाड़े बजाते हुए फूल बरसाने लगे। वे सभी प्रेम से पुलकित होकर और हृदय में उत्साहित होकर रामचन्द्र का विवाह देखने चले।

182 दसरथु सहित समाज बिराजे। बिभव बिलोकि लोकपति लाजे॥ 1.319.C5
183 एहि बिधि रामु मंडपहिं आए। अरघु देइ आसन बैठाए॥ 1.319.C8

जनकपुर पहुँचकर दशरथ जी अपने समाज के साथ विराजमान हुए। उनके उस वैभव को देखकर लोकपाल भी लज्जित हो गए। इस प्रकार राम मण्डप में आए और उन्हें अर्घ्य देकर आसन पर बैठाया गया।

184 सीय सँवारि समाजु बनाई। मुदित मंडपहिं चलीं लवाई॥ 1.322.C8
185 तेहि अवसर कर बिधि ब्यवहारू। दुहुँ कुलगुर सब कीन्ह अचारू॥1.323.C8
सीता का श्रृंगार करके सखियाँ उन्हें मण्डप में ले आईं। दोनों कुलों के गुरुओं ने उस अवसर की रीति, व्यवहार और कुलाचार सम्पन्न किए।

186 होम समय तनु धरि अनलु अति सुख आहुति लेहिं। 1.323.D1
187 बिप्र बेष धरि बेद सब कहि बिबाह बिधि देहिं॥ 1.323.D2
हवन के समय अग्निदेव शरीर धारण करके अत्यंत प्रसन्नता से आहुति लेते हैं। चारों वेद ब्राह्मण का रूप धरकर विवाह की विधियाँ बताते हैं।

188 कुअँरु कुअँरि कल भावँरि देहीं। नयन लाभु सब सादर लेहीं॥ 1.325.C1
189 राम सीय सिर सेंदुर देहीं। सोभा कहि न जाति बिधि केहीं॥ 1.325.C8
वर-कन्या की सुंदर भाँवरों को पड़ता देखकर सभी आदरपूर्वक अपने नेत्रों का लाभ ले रहे हैं। राम सीता की माँग में सिंदूर भर रहे हैं, इस शोभा का वर्णन किसी प्रकार से नहीं किया जा सकता।

190 एहि बिधि राम बिआह उछाहू। सकइ न बरनि सहस मुख जाहू॥ 1.331.C8
191 बहुबिधि भूप सुता समुझाईं। नारिधरमु कुलरीति सिखाईं॥ 1.339.C1
इस प्रकार राम विवाह का उत्सव हुआ, जिसका वर्णन हजार मुखवाले शेष भी नहीं कर सकते। राजा जनक ने पुत्री सीता को बहुत प्रकार से समझाया और उन्हें स्त्री धर्म तथा कुल की रीति सिखाई।

192 सीय चलत ब्याकुल पुरबासी। होहिं सगुन सुभ मंगल रासी॥ 1.339.C3
193 चली बरात निसान बजाई। मुदित छोट बड़ सब समुदाई॥ 1.343.C7

सीता की विदाई पर उनके चलते समय नगर के लोग बड़े व्याकुल हो गए। मंगल की राशि शुभ शकुन होने लगे। डंका बजाकर बारात चलने लगी। उस समय छोटे-बड़े सभी लोग प्रसन्न थे।

194 समउ जानि गुर आयसु दीन्हा। पुर प्रबेसु रघुकुलमनि कीन्हा ॥ 1.347.C7
195 आए ब्याहि रामु घर जब तें। बसइ अनंद अवध सब तब तें ॥ 1.361.C5
अयोध्या पहुँचकर उचित समय पर गुरु वसिष्ठ ने दशरथ को नगर में प्रवेश करने की आज्ञा दी। जब से राम विवाह करके घर आए, अयोध्या में सब प्रकार के आनंद होने लगे।

196 सिय रघुबीर बिबाहु जे सप्रेम गावहिं सुनहिं। 1.361.S1
197 तिन्ह कहुँ सदा उछाहु मंगलायतन राम जसु ॥ 1.361.S2
राम और सीता का शुभ विवाह-प्रसंग जो भी प्रेम से गाते अथवा सुनते हैं, वे सदा उत्साह और आनंद से रहते हैं, क्योंकि रामचन्द्र जी का यश ही मंगल का धाम है।

अयोध्याकाण्ड

198 श्रीगुरु चरन सरोज रज निज मनु मुकुरु सुधारि । 2.0.D1
199 बरनउँ रघुबर बिमल जसु जो दायकु फल चारि ॥ 2.0.D2

श्री गुरु की चरण-कमल की धूलि से अपने मन के दर्पण को साफ करके, मैं श्री रघुनाथ के उस निर्मल यश का वर्णन करता हूँ, जो चारों फलों (धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष) को देने वाला है।

200 जब तें रामु ब्याहि घर आए। नित नव मंगल मोद बधाए ॥ 2.1.C1
201 सब बिधि सब पुर लोग सुखारी। रामचंद मुख चंदु निहारी ॥ 2.1.C6

जब से राम विवाह करके अयोध्या आए, वहाँ नित्य नए मंगल हो रहे हैं, आनंद के बधावे बज रहे हैं। नगर के सारे लोग राम के मुखचन्द्र को देखकर हर प्रकार से सुखी हैं।

202 एक समय सब सहित समाजा। राजसभाँ रघुराजु बिराजा ॥ 2.2.C1
203 रायँ सुभायँ मुकुरु कर लीन्हा। बदनु बिलोकि मुकुटु सम कीन्हा ॥ 2.2.C6

एक बार राजा दशरथ सारे समाज के साथ अपनी राजसभा में बैठे हुए थे। राजा ने सहज स्वभाव से दर्पण हाथ में लिया और उसमें अपना मुख देखकर मुकुट को सीधा किया।

204 श्रवन समीप भए सित केसा। मनहुँ जरठपनु अस उपदेसा ॥ 2.2.C7
205 नृप जुबराजु राम कहुँ देहू। जीवन जनम लाहु किन लेहू ॥ 2.2.C8

उन्होंने देखा कि कानों के पास के बाल सफेद हो रहे हैं, जैसे बुढ़ापा उन्हें उपदेश दे रहा हो कि राम को युवराज बनाकर अपने जीवन और जन्म का लाभ क्यों नहीं लेते?

206 यह बिचारु उर आनि नृप सुदिनु सुअवसरु पाइ । 2.2.D1
207 प्रेम पुलकि तन मुदित मन गुरहि सुनायउ जाइ ॥ 2.2.D2

मन में यह विचार लेकर राजा ने एक शुभ दिन पुलकित शरीर और प्रसन्न मन से गुरु वसिष्ठ के पास जाकर अपनी बात बताई।

208 बेगि बिलंबु न करिअ नृप साजिअ सबुइ समाजु । 2.4.D1
209 सुदिन सुमंगलु तबहिं जब रामु होहिं जुबराजु ॥ 2.4.D2

गुरु बोले, "हे राजन्! अब आप देर न करें, तुरंत सब सामान की व्यवस्था करें। शुभ दिन और सुमंगल तब ही है, जब राम युवराज होंगे।"

210 मुदित महीपति मंदिर आए। सेवक सचिव सुमंत्रु बोलाए ॥ 2.5.C1
211 जौं पाँचहि मत लागै नीका। करहु हरषि हियँ रामहि टीका ॥ 2.5.C3

राजा प्रसन्न होकर अपने महल में पहुँचे और सुमंत्र आदि मंत्रियों को बुलाकर कहा, "यदि आप पंचों को उचित लगे तो हृदय में हर्षित होकर राम का राजतिलक कीजिए।"

212 जग मंगल भल काजु बिचारा। बेगिअ नाथ न लाइअ बारा ॥ 2.5.C6
213 सुनत राम अभिषेक सुहावा। बाज गहागह अवध बधावा ॥ 2.7.C3

मंत्री बोले, "आपने विश्व का मंगल करने वाला काम सोचा है। हे नाथ! इसे शीघ्र ही करें, देर न लगाएँ।" राम के राज्याभिषेक के सुहावने समाचार सुनते ही अयोध्या में बड़ी धूम से बधावे बजने लगे।

214 दीख मंथरा नगरु बनावा। मंजुल मंगल बाज बधावा ॥ 2.13.C1
215 पूछेसि लोगन्ह काह उछाहू। राम तिलकु सुनि भा उर दाहू ॥ 2.13.C2

रानी कैकेयी की दासी मंथरा ने जब देखा कि नगर सजा हुआ है और चारों तरफ सुंदर मंगल बधावे बज रहे हैं, उसने लोगों से उत्सव का कारण पूछा। राम के अभिषेक की बात सुनकर उसका हृदय जल उठा।

216 भरत मातु पहिं गइ बिलखानी। का अनमनि हसि कह हँसि रानी॥ 2.13.C5

उदास होकर वह भरत की माँ कैकेयी के पास गई। रानी ने हँसकर पूछा, "तू उदास क्यों है?"

217 सभय रानि कह कहसि किन कुसल रामु महिपालु। 2.13.D1
218 लखनु भरतु रिपुदमनु सुनि भा कुबरी उर सालु॥ 2.13.D2
मंथरा को चुप देखकर रानी चिंतित हो गईं और डरते-डरते पूछा, "अरी! कुछ कहती क्यों नहीं? राम, लक्ष्मण, भरत, शत्रुघ्न और महाराज दशरथ कुशल से तो हैं?" यह सुनकर कुबड़ी मंथरा को बहुत पीड़ा हुई।

219 रामहि छाड़ि कुसल केहि आजू। जेहि जनेसु देइ जुबराजू॥ 2.14.C2
220 जारै जोगु सुभाउ हमारा। अनभल देखि न जाइ तुम्हारा॥ 2.16.C7
वह बोली, "हे रानी! राम को छोड़कर आज और किसकी कुशल है, जिन्हें महाराज युवराज बना रहे हैं। मेरा स्वभाव तो जलाने ही योग्य है, पर तुम्हारा बुरा मुझसे देखा नहीं जाता।"

221 भावी बस प्रतीति उर आई। पूँछ रानि पुनि सपथ देवाई॥ 2.19.C1
222 रामहि तिलक कालि जौं भयऊ। तुम्ह कहुँ बिपति बीजु बिधि बयऊ॥ 2.19.C6
होनहारवश कैकेयी को मंथरा पर विश्वास हो गया, फिर शपथ दिलाकर उससे सारी बातें पूछने लगीं। मंथरा ने कहा, "यदि कल राम का राजतिलक हो गया तो समझ लेना कि ब्रह्मा ने तुम्हारे लिए कष्टों के बीज बो दिए।"

223 कैकयसुता सुनत कटु बानी। कहि न सकइ कछु सहमि सुखानी॥ 2.20.C1
224 काह करौं सखि सूध सुभाऊ। दाहिन बाम न जानउँ काऊ॥ 2.20.C7
मंथरा की कड़वी बातें सुनकर कैकेयी डरकर सूख गईं, पर कुछ कह न सकीं। सँभलकर रानी बोलीं, "हे सखी! मैं क्या करूँ? मेरा तो स्वभाव ही सीधा है, मैं दायाँ-बायाँ कुछ भी तो नहीं जानती।"

225 अपनें चलत न आजु लगि अनभल काहुक कीन्ह। 2.20.D1
226 केहिं अघ एकहि बार मोहि दैअँ दुसह दुखु दीन्ह॥ 2.20.D2
"अपने चलते मैंने आज तक कभी किसी का बुरा नहीं किया, न जाने किस पाप से विधाता ने एक ही साथ मुझे यह असहनीय दु:ख दिया है।"

227 दुइ बरदान भूप सन थाती। मागहु आजु जुड़ावहु छाती॥ 2.22.C5
228 सुतहि राजु रामहि बनबासू। देहु लेहु सब सवति हुलासू॥ 2.22.C6
मंथरा बोली, "आपके दो वरदान राजा के पास धरोहर हैं, उन्हें आज माँगकर अपनी छाती ठंडी कर लो। अपने पुत्र भरत के लिए राज्य और राम के लिए वनवास माँगकर सौत का सारा आनंद छीन लो।"

229 कोप समाजु साजि सबु सोई। राजु करत निज कुमति बिगोई॥ 2.23.C7
230 कोपभवन सुनि सकुचेउ राऊ। भय बस अगहुड़ परइ न पाऊ॥ 2.25.C1
रानी कैकेयी कोप के सारे साज सजकर भवन में सो गईं। राज्य करती हुई वह अपनी दुर्बुद्धि से नष्ट हो गईं। कैकेयी के कोपभवन जाने की बात सुनकर राजा दशरथ सहम गए। डर के मारे उनका पैर आगे नहीं पड़ रहा था।

231 जाइ निकट नृपु कह मृदु बानी। प्रानप्रिया केहि हेतु रिसानी॥ 2.25.C8
232 बिहसि मागु मनभावति बाता। भूषन सजहि मनोहर गाता॥ 2.26.C7
कैकेयी के पास जाकर राजा कोमल वचन बोले, "हे प्राणप्रिये! तुम किसलिए रूठी हो? हँसकर मन को भानेवाली वस्तु माँग लो और अपने सुंदर अंगों को आभूषणों से सजाओ।"

233 मागु मागु पै कहहु पिय कबहुँ न देहु न लेहु। 2.27.D1
234 देन कहेहु बरदान दुइ तेउ पावत संदेहु॥ 2.27.D2
कैकेयी बोलीं, "हे प्रियतम! आप 'माँग-माँग' कहते तो अवश्य हैं, पर कभी देते-लेते कुछ भी नहीं। आपने दो वरदान देने को कहा था, मुझे तो उनके मिलने में भी संदेह है।"

235 थाती राखि न मागिहु काऊ। बिसरि गयउ मोहि भोर सुभाऊ॥ 2.28.C2
236 रघुकुल रीति सदा चलि आई। प्रान जाहुँ बरु बचनु न जाई॥ 2.28.C4
राजा बोले, "धरोहर रखकर तुमने कभी कुछ माँगा ही नहीं। अपने भूलने के स्वभाव के कारण मुझे भी याद नहीं रहा। रघुकुल में सदा से यह रीति चली आ रही है कि प्राण भले ही क्यों न चले जाएँ, पर दिए हुए वचन से पीछे नहीं हटा जाता।"

237 सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का। देहु एक बर भरतहि टीका ॥ 2.29.C1
238 तापस बेष बिसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनबासी ॥ 2.29.C3
कैकेयी बोलीं, "हे प्राणप्रिय! मेरे मन को भानेवाला पहला वर यह दीजिए कि भरत का राजतिलक हो। मेरा दूसरा वर यह है कि राम तपस्वी के वेष में उदासीन भाव से चौदह वर्ष वन में वास करें।"

239 बोले राउ कठिन करि छाती। बानी सबिनय तासु सोहाती ॥ 2.31.C4
सुनकर राजा एकदम सहम गए और अपनी छाती कड़ी करके बड़ी विनम्रता से रानी को प्रिय लगने वाली वाणी बोले,

240 लोभु न रामहि राजु कर बहुत भरत पर प्रीति। 2.31.D1
241 मैं बड़ छोट बिचारि जियँ करत रहेउँ नृपनीति ॥ 2.31.D2
"राम को राज्य का कोई लोभ नहीं, वे तो भरत से बहुत प्रेम करते हैं। मैं ही बड़े-छोटे का विचार करते हुए राजनीति का पालन कर रहा था।"

242 कहउँ सुभाउ न छलु मन माहीं। जीवनु मोर राम बिनु नाहीं ॥ 2.33.C2
243 मागु माथ अबहीं देउँ तोही। राम बिरहँ जनि मारसि मोही ॥ 2.34.C7
"मन में बिना किसी छल-कपट के अपने स्वभाव से कहता हूँ कि बिना राम के मेरा जीवन सम्भव नहीं। तू मेरा मस्तक माँग ले, अभी दे दूँ, पर राम के विरह में मुझे मत मार।"

244 राम राम रट बिकल भुआलू। जनु बिनु पंख बिहंग बेहालू ॥ 2.37.C1
राम-राम रटते-रटते राजा दशरथ ऐसे व्याकुल हुए जैसे बिना पंख का पक्षी बेहाल हो जाता है।

245 गए सुमंत्रु तब राउर माहीं। देखि भयावन जात डेराहीं ॥ 2.38.C3
246 सचिउ सभीत सकइ नहिं पूँछी। बोली असुभ भरी सुभ छूँछी ॥ 2.38.C8
सुबह होने पर मंत्री सुमंत्र राजमहल में गए पर वहाँ की भयानक स्थिति देखकर उन्हें अन्दर जाते हुए डर लग रहा था। मारे भय के उनसे कुछ पूछा नहीं जा रहा था। तब अशुभ से भरी और शुभ से रिक्त कैकेयी बोलीं।

247 परी न राजहि नीद निसि हेतु जान जगदीसु। 2.38.D1
248 रामु रामु रटि भोरु किय कहइ न मरमु महीसु॥ 2.38.D2
"राजा को रात भर नींद नहीं आई, इसका कारण तो भगवान ही जानें। राम-राम रटकर सबेरा कर दिया, पर इसका कारण नहीं बतलाते।"

249 आनहु रामहि बेगि बोलाई। समाचार तब पूँछेहु आई॥ 2.39.C1
250 करुनामय मृदु राम सुभाऊ। प्रथम दीख दुखु सुना न काऊ॥ 2.40.C3
"इसलिए तुम जल्दी जाकर राम को बुला लाओ, तब आकर सारे समाचार पूछना।" राम तो स्वभाव से ही कोमल और करुणामय हैं। वहाँ आकर उन्होंने पहली बार ऐसा दु:ख देखा, जो अभी तक सुना भी न था।

251 मोहि कहु मातु तात दुख कारन। करिअ जतन जेहिं होइ निवारन॥ 2.40.C5
252 देन कहेन्हि मोहि दुइ बरदाना। मागेउँ जो कछु मोहि सोहाना॥ 2.40.C7
वे कैकेयी से बोले, "हे माता! मुझे पिताजी के दु:ख का कारण बताओ, ताकि उसे दूर करने का उपाय किया जा सके।" कैकेयी बोलीं, "हे राम! राजा ने मुझे दो वरदान दिए थे। मुझे जो अच्छा लगा, मैंने आज माँग लिया।"

253 सब प्रसंगु रघुपतिहि सुनाई। बैठि मनहुँ तनु धरि निठुराई॥ 2.41.C4
254 भरतु प्रानप्रिय पावहिं राजू। बिधि सब बिधि मोहि सनमुख आजू॥ 2.42.C1
राम को सारी बात सुनाकर रानी कैकेयी ऐसे बैठी हैं, जैसे निष्ठुरता ने शरीर धारण किया हो। राम बोले, "मेरे प्राणप्रिय भाई भरत राज पाएँगे, आज विधाता सब प्रकार से मेरे अनुकूल हैं।"

255 जौं न जाउँ बन ऐसेहु काजा। प्रथम गनिअ मोहि मूढ़ समाजा॥ 2.42.C2
256 आयसु पालि जनम फलु पाई। ऐहउँ बेगिहिं होउ रजाई॥ 2.46.C3
"यदि ऐसे काम के लिए भी मैं वन नहीं गया तो मूर्खों के समाज में मेरी गिनती सबसे पहले होगी। आपकी आज्ञा का पालन करके और अपने जन्म का फल पाकर मैं जल्द ही लौट आऊँगा। अतः मुझे आज्ञा दीजिए।"

257 समाचार तेहि समय सुनि सीय उठी अकुलाइ। 2.57.D1
258 जाइ सासु पद कमल जुग बंदि बैठि सिरु नाइ॥ 2.57.D2
जब सीता को राम के वन जाने का समाचार मिला, वे अकुला उठीं। अपनी सास के पास जाकर उनके दोनों चरणकमलों की वंदना की और सिर झुकाकर बैठ गईं।

259 चलन चहत बन जीवन नाथू। केहि सुकृती सन होइहि साथू॥ 2.58.C3
260 की तनु प्रान कि केवल प्राना। बिधि करतबु कछु जाइ न जाना॥ 2.58.C4
वे सोचने लगीं कि मेरे प्राणनाथ आज वन जा रहे हैं, मेरे किन पुण्य कर्मों से उनका साथ संभव होगा। यह शरीर और प्राण दोनों साथ जाएँगे या केवल प्राण ही? विधाता क्या करने वाला है, कुछ पता नहीं।

261 मातु समीप कहत सकुचाहीं। बोले समउ समुझि मन माहीं॥ 2.61.C1
राम माता के सामने कहने में संकोच करते हैं, पर समय की आवश्यकता को देखकर बोले।

262 हंसगवनि तुम्ह नहिं बन जोगू। सुनि अपजसु मोहि देइहि लोगू॥ 2.63.C5
263 रहहु भवन अस हृदयँ बिचारी। चंदबदनि दुखु कानन भारी॥ 2.63.C8
"हे हंसगामिनी! तुम वन के योग्य नहीं हो। तुम्हारे जाने से लोग मुझे अपयश देंगे। हृदय में ऐसा विचारकर तुम यहाँ घर पर ही रहो। हे चन्द्रमुखी! वन में बड़े भारी दुःख हैं।"

264 सहज सुहृद गुर स्वामि सिख जो न करइ सिर मानि। 2.63.D1
265 सो पछिताइ अघाइ उर अवसि होइ हित हानि॥ 2.63.D2
"स्वभाव से ही भला चाहनेवाले गुरु और स्वामी की सीख को जो सिर रखकर नहीं मानता, वह मन ही मन बहुत पछताता है, उसके हित की हानि अवश्य होती है।"

266 मैं पुनि समुझि दीखि मन माहीं। पिय बियोग सम दुखु जग नाहीं॥ 2.64.C7
267 कहेउ कृपाल भानुकुलनाथा। परिहरि सोचु चलहु बन साथा॥ 2.68.C3

सीता बोलीं, "हे नाथ! मैंने भी इसका मन में बार-बार विचार किया है, पति के वियोग जैसा संसार में कोई दु:ख नहीं है।" यह सुनकर सूर्यवंश के स्वामी कृपालु राम ने सीता को सोच-विचार छोड़कर साथ चलने को कहा।

268 समाचार जब लछिमन पाए। ब्याकुल बिलख बदन उठि धाए ॥ 2.70.C1
269 राम बिलोकि बंधु कर जोरें। देह गेह सब सन तृनु तोरें ॥ 2.70.C6
जब लक्ष्मण ने ये समाचार पाए, वे बड़े व्याकुल होकर उदास मुख से राम की ओर दौड़ पड़े। राम ने भाई लक्ष्मण को हाथ जोड़े हुए और शरीर तथा घर सब से नाता तोड़े हुए खड़े देखा।

270 मैं बन जाउँ तुम्हहि लेइ साथा। होइ सबहि बिधि अवध अनाथा ॥ 2.71.C3
271 गुरु पितु मातु प्रजा परिवारू। सब कहुँ परइ दुसह दुख भारू ॥ 2.71.C4
राम बोले, "यदि मैं तुम्हें साथ लेकर वन जाता हूँ तो अयोध्या हर प्रकार से अनाथ हो जाएगी। गुरु, पिता, माताओं तथा समस्त परिवार पर असहनीय दु:ख का भार पड़ेगा।"

272 उतरु न आवत प्रेम बस गहे चरन अकुलाइ। 2.71.D1
273 नाथ दासु मैं स्वामि तुम्ह तजहु त काह बसाइ ॥ 2.71.D2
प्रेमवश लक्ष्मण से कुछ कहते नहीं बनता। अकुलाकर राम के चरण पकड़कर बोले, "हे नाथ! आप स्वामी हैं और मैं आपका दास हूँ। आप मुझे छोड़ भी दें तो मेरा क्या वश है?"

274 गुर पितु मातु न जानउँ काहू। कहउँ सुभाउ नाथ पतिआहू ॥ 2.72.C4
275 मोरें सबइ एक तुम्ह स्वामी। दीनबंधु उर अंतरजामी ॥ 2.72.C6
"हे नाथ! मैं स्वभाव से ही कहता हूँ कि आपको छोड़कर गुरु, माता, पिता किसी को नहीं जानता। आप दीनबंधु हैं, सबके हृदय के अन्दर की बात जाननेवाले हैं। स्वामी! मेरे तो सब कुछ केवल आप ही हैं।"

276 मागहु बिदा मातु सन जाई। आवहु बेगि चलहु बन भाई ॥ 2.73.C1

लक्ष्मण की विनती सुनकर राम बोले, "हे भाई! जाओ, माता से विदा माँगकर आओ ताकि हम शीघ्र ही वन को जा सकें।"

277 पूँछे मातु मलिन मन देखी। लखन कही सब कथा बिसेषी॥ 2.73.C5
278 जौं पै सीय रामु बन जाहीं। अवध तुम्हार काजु कछु नाहीं॥ 2.74.C4
लक्ष्मण माता सुमित्रा के पास गए। माता ने उदास मुख देखकर उसका कारण पूछा। उन्होंने सारी कथा विस्तार से सुनाई। माता बोलीं, "यदि राम और सीता वन को जा रहे हैं तो अवध में तुम्हारा कुछ भी काम नहीं।"

279 बंदि राम सिय चरन सुहाए। चले संग नृपमंदिर आए॥ 2.76.C2
280 सिय समेत दोउ तनय निहारी। ब्याकुल भयउ भूमिपति भारी॥ 2.76.C8
माता से विदा लेकर लक्ष्मण ने राम और सीता के सुन्दर चरणों की वंदना की और उनके साथ महाराज दशरथ के महल में आए। सीता के साथ अपने दोनों पुत्रों को वन में जाने के लिए तैयार देखकर राजा बहुत व्याकुल हुए।

281 नाइ सीसु पद अति अनुरागा। उठि रघुबीर बिदा तब मागा॥ 2.77.C2
282 रामु तुरत मुनि बेषु बनाई। चले जनक जननिहि सिरु नाई॥ 2.79.C8
तब राम ने बड़े प्रेम से उनके चरणों में झुककर विदा माँगी। फिर वे मुनि का वेष बनाकर और माता-पिता को सिर नवाकर चल दिए।

283 सजि बन साजु समाजु सबु बनिता बंधु समेत। 2.79.D1
284 बंदि बिप्र गुर चरन प्रभु चले करि सबहि अचेत॥ 2.79.D2
वन के लिए आवश्यक सामग्री लेकर राम ने पत्नी और भाई सहित ब्राह्मणों और गुरु के चरणों की वंदना की और सबको अचेत करके वन को चल दिए।

285 सीता सचिव सहित दोउ भाई। सृंगबेरपुर पहुँचे जाई॥ 2.87.C1
कुछ समय बाद सीता और मंत्री सुमंत्र के साथ दोनों भाई श्रृंगवेरपुर पहुँचे।

286 यह सुधि गुहँ निषाद जब पाई। मुदित लिए प्रिय बंधु बोलाई॥ 2.88.C1
287 नाथ कुसल पद पंकज देखें। भयउँ भागभाजन जन लेखें॥ 2.88.C5

जब निषादराज गुह को राम के आने का समाचार मिला, वह अपने प्रिय भाई-बंधुओं को साथ लेकर उनके पास आकर बोला, "हे नाथ! आपके चरणकमलों के दर्शन से ही मैं कुशल हो गया, अब मैं भाग्यवान लोगों में गिना जाऊँगा।"

288 लै रघुनाथहि ठाउँ देखावा। कहेउ राम सब भाँति सुहावा॥ 2.89.C5
उसने राम को रात में ठहरने का स्थान दिखाया। प्रभु ने प्रशंसा करते हुए कहा, "यह स्थान सब तरह से सुंदर है।"

289 बरबस राम सुमंत्रु पठाए। सुरसरि तीर आपु तब आए॥ 2.100.C2
290 मागी नाव न केवटु आना। कहइ तुम्हार मरमु मैं जाना॥ 2.100.C3
दूसरे दिन राम ने जबरदस्ती सुमंत्र को लौटाया और स्वयं गंगा के किनारे आए। वहाँ उन्होंने केवट से गंगा पार करने के लिए नाव माँगी, पर वह नहीं लाया। वह कहने लगा, "मैं आपका सारा रहस्य जान गया हूँ।"

291 छुअत सिला भइ नारि सुहाई। पाहन तें न काठ कठिनाई॥ 2.100.C5
292 जौं प्रभु पार अवसि गा चहहू। मोहि पद पदुम पखारन कहहू॥ 2.100.C8
"आपके चरणों की धूल के स्पर्श से पत्थर की शिला स्त्री हो गई, मेरी नाव तो लकड़ी की है, जो पत्थर से अधिक कठोर नहीं है। हे प्रभु! यदि आप उस पार जाना चाहते हैं तो मुझे पहले अपने चरणकमलों को धोने की आज्ञा दीजिए।"

293 कृपासिंधु बोले मुसुकाई। सोइ करु जेहिं तव नाव न जाई॥ 2.101.C1
294 अति आनंद उमगि अनुरागा। चरन सरोज पखारन लागा॥ 2.101.C7
कृपा के सागर राम ने मुस्कराकर कहा, "हे केवट! तुम वही करो जिससे तुम्हारी नाव न जाए।" तब केवट बड़ा आनंदित होकर असीम प्रेम से भगवान के चरणकमलों को धोने लगा।

295 पद पखारि जलु पान करि आपु सहित परिवार। 2.101.D1
296 पितर पारु करि प्रभुहि पुनि मुदित गयउ लेइ पार॥ 2.101.D2
प्रभु के चरणों को धोकर और परिवार सहित उस जल को पीकर, उसने अपने पितरों को भवसागर से पार किया और फिर प्रसन्नता से प्रभु को गंगा पार ले गया।

297 केवट उतरि दंडवत कीन्हा। प्रभुहि सकुच एहि नहिं कछु दीन्हा ॥ 2.102.C2
298 पिय हिय की सिय जाननिहारी। मनि मुदरी मन मुदित उतारी ॥ 2.102.C3
केवट ने उतरकर प्रभु को दण्डवत प्रणाम किया। प्रभु को मन में संकोच हुआ कि मैंने इसे कुछ उतराई नहीं दी। पति के हृदय की बात जाननेवालीं सीता ने प्रसन्न मन से अपनी मणि की अँगूठी उतारकर प्रभु को दी।

299 कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई ॥ 2.102.C4
300 नाथ आजु मैं काह न पावा। मिटे दोष दुख दारिद दावा ॥ 2.102.C5
जब राम ने केवट से कहा कि अपनी उतराई लो, तब केवट ने व्याकुल होकर उनके चरण पकड़ लिए और बोला, "हे नाथ! आज मुझे क्या कुछ नहीं मिला? मेरे दोष, दुःख और दरिद्रता की आग आज बुझ गई।"

301 बहुत कीन्ह प्रभु लखन सियँ नहिं कछु केवटु लेइ । 2.102.D1
302 बिदा कीन्ह करुनायतन भगति बिमल बरु देइ ॥ 2.102.D2
राम, सीता और लक्ष्मण के बहुत आग्रह के बाद भी जब केवट ने कुछ नहीं लिया तो करुणा के धाम श्री राम ने अपनी निर्मल भक्ति का वरदान देकर उसे विदा किया।

303 तब गनपति सिव सुमिरि प्रभु नाइ सुरसरिहि माथ । 2.104.D1
304 सखा अनुज सिय सहित बन गवनु कीन्ह रघुनाथ ॥ 2.104.D2
तब प्रभु ने गणेश और शिव जी का स्मरण किया और गंगा को माथा नवाकर मित्र निषादराज गुह, भाई लक्ष्मण और सीता के साथ वन की ओर चल दिए।

305 तब प्रभु भरद्वाज पहिं आए। करत दंडवत मुनि उर लाए ॥ 2.106.C7
306 आजु सुफल तपु तीरथ त्यागू। आजु सुफल जप जोग बिरागू ॥ 2.107.C5
कुछ समय बाद प्रभु भरद्वाज मुनि के पास पहुँचे। उनके दण्डवत करते ही, मुनि राम को हृदय से लगाकर बोले, "हे प्रभु! आज मेरा तप, तीर्थवास, त्याग, जप, योग, वैराग्य सब सफल हो गया।"

307 सुनि मुनि बचन रामु सकुचाने। भाव भगति आनंद अघाने ॥ 2.108.C1
308 सो बड़ सो सब गुन गन गेहू। जेहि मुनीस तुम्ह आदर देहू ॥ 2.108.C3

मुनि के वचन सुनकर राम सकुचा गए और भक्ति-भाव के आनंद से तृप्त हो गए। वे बोले, "हे मुनीश्वर! आप जिसे आदर दें वही बड़ा है, उसी में सभी गुणों का वास है।"

309 राम कीन्ह बिश्राम निसि प्रात प्रयाग नहाइ। 2.108.D1
310 चले सहित सिय लखन जन मुदित मुनिहि सिरु नाइ॥ 2.108.D2

राम ने रात को वहीं विश्राम किया। सुबह प्रयागराज का स्नान करके, प्रसन्नता से मुनि को सिर नवाकर, वे सीता, भाई लक्ष्मण और सेवक गुह के साथ चल दिए।

311 आगें रामु लखनु बने पाछें। तापस बेष बिराजत काछें॥ 2.123.C1
312 उभय बीच सिय सोहति कैसें। ब्रह्म जीव बिच माया जैसें॥ 2.123.C2

आगे-आगे राम हैं, पीछे-पीछे लक्ष्मण। तपस्वियों के वेष में दोनों बहुत सुंदर लग रहे हैं। दोनों के बीच में सीता ऐसी सुशोभित हो रही हैं, जैसे ब्रह्म और जीव के बीच में माया।

313 देखत बन सर सैल सुहाए। बालमीकि आश्रम प्रभु आए॥ 2.124.C5
314 देखि पाय मुनिराय तुम्हारे। भए सुकृत सब सुफल हमारे॥ 2.126.C1

सुंदर वन, तालाब और पर्वतों को देखते-देखते प्रभु वाल्मीकि मुनि के आश्रम में पहुँचे। प्रभु ने कहा, "हे मुनिराज! आपके चरणों के दर्शन से आज हमारे सब पुण्य-कर्म सफल हो गए।"

315 अब जहँ राउर आयसु होई। मुनि उदबेगु न पावै कोई॥ 2.126.C2
316 अस जियँ जानि कहिअ सोइ ठाऊँ। सिय सौमित्रि सहित जहँ जाऊँ॥ 2.126.C5

"अब जहाँ आपकी आज्ञा हो, ऋषि-मुनियों को परेशानी न हो, ऐसा मन में जान वह स्थान बतायें, जहाँ मैं सीता और लक्ष्मण के साथ जाकर रहूँ।"

317 पूँछेहु मोहि कि रहौं कहँ मैं पूँछत सकुचाउँ। 2.127.D1
318 जहँ न होहु तहँ देहु कहि तुम्हहि देखावौं ठाउँ॥ 2.127.D2

मुनि बोले, "हे राम! आप मुझसे पूछ रहे हैं कि मैं कहाँ रहूँ, मुझे यह पूछते हुए संकोच हो रहा है कि ऐसा कौन सा स्थान है, जहाँ आप नहीं हैं! पहले वह स्थान मुझे बता दीजिए, तब मैं आपके रहने का स्थान बता सकूँगा।"

319 काम कोह मद मान न मोहा। लोभ न छोभ न राग न द्रोहा॥ 2.130.C1
320 जिन्ह कें कपट दंभ नहिं माया। तिन्ह कें हृदय बसहु रघुराया॥ 2.130.C2
"जिनके मन में काम, क्रोध, मद, अभिमान, मोह, लोभ, क्षोभ, राग, द्रोह, कपट, दंभ और माया नहीं हैं- हे रघुराज! आप उनके हृदय में निवास करें।"

321 तुम्हहि छाड़ि गति दूसरि नाहीं। राम बसहु तिन्ह के मन माहीं॥ 2.130.C5
"आपको छोड़ जिनके मन में दूसरा कोई आश्रय नहीं है- हे राम! आप उनके मन में बसिए।"

322 कह मुनि सुनहु भानुकुलनायक। आश्रम कहउँ समय सुखदायक॥ 2.132.C2
323 चित्रकूट गिरि करहु निवासू। तहँ तुम्हार सब भाँति सुपासू॥ 2.132.C3
फिर मुनि बोले, "हे सूर्यकुल के नायक! समय के अनुसार आपको एक सुखदायक स्थान बताता हूँ, आप चित्रकूट पर्वत पर निवास करें। वहाँ आपके लिए सब प्रकार की सुविधा है।"

324 चित्रकूट महिमा अमित कही महामुनि गाइ। 2.132.D1
325 आइ नहाए सरित बर सिय समेत दोउ भाइ॥ 2.132.D2
फिर उन्होंने चित्रकूट की असीम महिमा का वर्णन किया। सीता सहित दोनों भाइयों ने वहाँ पहुँचकर श्रेष्ठ मंदाकिनी नदी में स्नान किया।

326 चित्रकूट रघुनंदनु छाए। समाचार सुनि सुनि मुनि आए॥ 2.134.C5
327 जब तें आइ रहे रघुनायकु। तब तें भयउ बनु मंगलदायकु॥ 2.137.C5
राम चित्रकूट में आकर बस गए हैं, यह समाचार सुनकर बहुत-से ऋषि-मुनि वहाँ आए। जब से रघुकुल के नायक वहाँ रहने लगे, तब से वन मंगलदायक हो गया।

328 कहेउँ राम बन गवनु सुहावा। सुनहु सुमंत्र अवध जिमि आवा॥ 2.142.C4
329 अवध प्रबेसु कीन्ह अँधिआरें। पैठ भवन रथु राखि दुआरें॥ 2.147.C5
तुलसीदास कहते हैं कि मैंने श्री राम के सुंदर वनगमन का वर्णन किया, अब सुमंत्र किस प्रकार अयोध्या लौटे वह सुनो। अँधेरा होने पर उन्होंने अयोध्या में प्रवेश किया और रथ को दरवाजे पर ही छोड़कर वे चुपके-से राजमहल में घुसे।

330 अति आरति सब पूँछहिं रानी। उतरु न आव बिकल भइ बानी॥ 2.148.C1
331 जाइ सुमंत्र दीख कस राजा। अमिअ रहित जनु चंदु बिराजा॥ 2.148.C4
बड़ी वेदना से सब रानियों ने उनसे राम के समाचार पूछे, पर सुमंत्र वाणी विकल होने से कुछ उत्तर नहीं दे पाए। उन्होंने महाराज को ऐसे बैठे देखा जैसे कि कोई बिना अमृत का चन्द्रमा हो।

332 बिलपत राउ बिकल बहु भाँती। भइ जुग सरिस सिराति न राती॥ 2.155.C3
333 हा रघुनंदन प्रान पिरीते। तुम्ह बिनु जिअत बहुत दिन बीते॥ 2.155.C7
व्याकुल राजा तरह-तरह से विलाप कर रहे हैं। वह रात एक युग के समान लम्बी हो गई, जैसे बीतती ही नहीं। दुखित राजा कहने लगे, "हे रघुनंदन! हे प्राणप्रिय राम! तुम्हारे बिना जीते हुए अब बहुत दिन बीत गए।"

334 राम राम कहि राम कहि राम राम कहि राम। 2.155.D1
335 तनु परिहरि रघुबर बिरहँ राउ गयउ सुरधाम॥ 2.155.D2
बारम्बार राम-राम कहकर, राम के वियोग में अपना शरीर त्यागकर, महाराज दशरथ सुरलोक को सिधार गए।

336 सोक बिकल सब रोवहिं रानी। रूपु सीलु बलु तेजु बखानी॥ 2.156.C3
337 बिलपहिं बिकल दास अरु दासी। घर घर रुदनु करहिं पुरबासी॥ 2.156.C5
शोक से व्याकुल होकर सारी रानियाँ रो-रोकर महाराज के रूप, शील, बल और तेज का बखान करने लगीं। दास-दासी भी व्याकुल होकर विलाप कर रहे हैं, अयोध्या के घर-घर में लोग रो रहे हैं।

338 तेल नावँ भरि नृप तनु राखा। दूत बोलाइ बहुरि अस भाषा॥ 2.157.C1
339 धावहु बेगि भरत पहिं जाहू। नृप सुधि कतहुँ कहहु जनि काहू॥ 2.157.C2
गुरु वसिष्ठ ने नाव में तेल भरवाकर उसमें राजा का शरीर रखवाया। फिर दूतों को बुलाकर कहा, "शीघ्र दौड़कर भरत के पास जाओ, पर राजा की मृत्यु का समाचार कहीं किसी से भी मत कहना।"

340 अनरथु अवध अरंभेउ जब तें। कुसगुन होहिं भरत कहुँ तब तें॥ 2.157.C5
341 देखहिं राति भयानक सपना। जागि करहिं कटु कोटि कलपना॥ 2.157.C6
उधर जब से अयोध्या में अनर्थ प्रारम्भ हुआ है, भरत को भी अपशकुन हो रहे हैं। उन्हें रात में भयंकर सपने दिखाई देते हैं और दिन में अनेकों बुरे-बुरे विचार आते हैं।

342 एहि बिधि सोचत भरत मन धावन पहुँचे आइ। 2.157.D1
343 गुर अनुसासन श्रवन सुनि चले गनेसु मनाइ॥ 2.157.D2
भरत इस प्रकार सोच-विचार कर ही रहे थे कि अयोध्या से दूत आ पहुँचे। गुरु की आज्ञा सुनकर वे तुरंत श्री गणेश मनाकर चल पड़े।

344 सुनहु भरत भावी प्रबल बिलखि कहेउ मुनिनाथ। 2.171.D1
345 हानि लाभु जीवनु मरनु जसु अपजसु बिधि हाथ॥ 2.171.D2
अयोध्या पहुँचकर उन्होंने सारी परिस्थिति देखी। गुरु वसिष्ठ ने दुखी होकर कहा, "हे भरत! सुनो, होनी बड़ी बलवान है। हानि-लाभ, जीवन-मरण, यश-अपयश सब विधाता के हाथ में है।"

346 भयउ न अहइ न अब होनिहारा। भूप भरत जस पिता तुम्हारा॥ 2.173.C6
347 रायँ राजपदु तुम्ह कहुँ दीन्हा। पिता बचनु फुर चाहिअ कीन्हा॥ 2.174.C3
"हे भरत! तुम्हारे पिता जैसा राजा न तो हुआ है, न ही होगा। उन्होंने तुम्हें राज्य का सिंहासन दिया है, पिता के वचन का तुम्हें पालन करना चाहिए।"

348 सौंपेहु राजु राम के आएँ। सेवा करेहु सनेह सुहाएँ॥ 2.175.C8
349 कौसल्या धरि धीरजु कहई। पूत पथ्य गुर आयसु अहई॥ 2.176.C1

"जब राम वापस लौटें, तब यह राज्य उन्हें सौंपकर सुन्दर स्नेह से उनकी सेवा करना।" माता कौसल्या ने भी धीरज रखकर कहा, "हे पुत्र! गुरु जी की आज्ञा पथ्यरूप अर्थात हितकारी है।"

350 मोहि उपदेसु दीन्ह गुर नीका। प्रजा सचिव संमत सबही का॥ 2.177.C1
351 हित हमार सियपति सेवकाईं। सो हरि लीन्ह मातु कुटिलाईं॥ 2.178.C1
भरत बोले, "गुरु जी ने मुझे सुन्दर उपदेश दिया है। प्रजा तथा मंत्रियों आदि सबका भी यही मत है। मेरा भला तो श्री राम की सेवा में ही है, जिसका अवसर माता कैकेयी की कुटिलता ने छीन लिया है।"

352 जाउँ राम पहिं आयसु देहू। एकहिं आँक मोर हित एहू॥ 2.178.C7
353 भरतहि कहहिं सराहि सराही। राम प्रेम मूरति तनु आही॥ 2.184.C4
"अतः मुझे आज्ञा दें कि मैं श्री राम के पास जाऊँ। निश्चयपूर्वक मेरा भला इसी में ही है।" सब भरत की सराहना करने लगे और कहते हैं कि आपका शरीर राम के प्रेम की साक्षात मूर्ति ही है।

354 अवसि चलिअ बन रामु जहँ भरत मंत्रु भल कीन्ह। 2.184.D1
355 सोक सिंधु बूड़त सबहि तुम्ह अवलंबनु दीन्ह॥ 2.184.D2
"हे भरत! आपने बड़ी अच्छी बात कही, हमें अवश्य ही वन को चलना चाहिए। हम सब शोक के सागर में डूब रहे थे, आपने आकर हमें बड़ा सहारा दिया।"

356 सौंपि नगर सुचि सेवकनि सादर सकल चलाइ। 2.187.D1
357 सुमिरि राम सिय चरन तब चले भरत दोउ भाइ॥ 2.187.D2
विश्वासपात्र सेवकों को नगर सौंपकर और सबको सादर रवाना करके, राम और सीता के चरणों का स्मरण करके, दोनों भाई भरत और शत्रुघ्न चल दिए।

358 नहिं पद त्रान सीस नहिं छाया। पेमु नेमु ब्रतु धरमु अमाया॥ 2.216.C5
359 एहि बिधि भरत चले मग जाहीं। दसा देखि मुनि सिद्ध सिहाहीं॥ 2.220.C5

न तो उनके पैरों में जूते हैं, न ही सिर पर छाया है। उनका प्रेम, नियम, व्रत और धर्म सच्चा है। भरत को इस प्रकार रास्ते में जाते हुए देखकर मुनि और सिद्ध भी उनकी सराहना करते हैं।

360 मिलहिं किरात कोल बनबासी। बैखानस बटु जती उदासी॥ 2.224.C4
361 करि प्रनामु पूँछहिं जेहि तेही। केहि बन लखनु रामु बैदेही॥ 2.224.C5
रास्ते में उन्हें किरात, कोल आदि वनवासी, वानप्रस्थ, ब्रह्मचारी, संन्यासी तथा विरक्त लोग मिलते हैं। भरत उन्हें प्रणाम करके पूछते हैं, "श्री राम, लक्ष्मण और सीता किस वन में हैं?"

362 ते प्रभु समाचार सब कहहीं। भरतहि देखि जनम फलु लहहीं॥ 2.224.C6
363 भरत दीख प्रभु आश्रमु पावन। सकल सुमंगल सदनु सुहावन॥ 2.239.C2
वे प्रभु के सब समाचार कहते हैं और भरत को देखकर अपने जन्म का फल पाते हैं। चलते-चलते भरत ने सब मंगलों का धाम, प्रभु का सुंदर और पवित्र आश्रम देखा।

364 पाहि नाथ कहि पाहि गोसाईं। भूतल परे लकुट की नाईं॥ 2.240.C2
365 उठे रामु सुनि पेम अधीरा। कहुँ पट कहुँ निषंग धनु तीरा॥ 2.240.C8
"हे नाथ! रक्षा कीजिए! रक्षा कीजिए!" कहकर भरत पृथ्वी पर एक डंडे की तरह गिर पड़े। भरत की आवाज सुनकर राम प्रेम से अधीर हो उठे। उनके वस्त्र कहीं, धनुष कहीं, तरकस कहीं और बाण कहीं जा गिरे।

366 बरबस लिए उठाइ उर लाए कृपानिधान। 2.240.D1
367 भरत राम की मिलनि लखि बिसरे सबहि अपान॥ 2.240.D2
उन्होंने जबरदस्ती भरत को उठाकर हृदय से लगा लिया। भरत-राम का यह मिलाप देखकर किसी को अपनी सुध न रही।

368 तब मुनि बोले भरत सन सब सँकोचु तजि तात। 2.259.D1
369 कृपासिंधु प्रिय बंधु सन कहहु हृदय कै बात॥ 2.259.D2
तब गुरु वसिष्ठ ने कहा, "हे भरत! सब संकोच छोड़कर कृपा के सागर प्रिय भाई से अपने हृदय की बात कहो।"

370 देव एक बिनती सुनि मोरी। उचित होइ तस करब बहोरी॥ 2.268.C7
371 तिलक समाजु साजि सबु आना। करिअ सुफल प्रभु जौं मनु माना॥ 2.268.C8
भरत बोले, "हे प्रभु! मेरी एक विनती सुनिए, फिर जैसा उचित समझें वैसा करें। मैं राजतिलक की सामग्री सजाकर लाया हूँ। हे प्रभो! आपका मन माने तो इसे स्वीकार करके सफल करें।"

372 नाथ भरतु पुरजन महतारी। सोक बिकल बनबास दुखारी॥ 2.290.C4
373 उचित होइ सोइ कीजिअ नाथा। हित सबही कर रौरें हाथा॥ 2.290.C6
राम ने गुरु वसिष्ठ से कहा, "हे नाथ! भरत, माताएँ तथा अयोध्या के लोग सभी शोक से व्याकुल और वनवास से दुखी हैं। आप जैसा उचित समझें वैसा करें, क्योंकि हम सबकी भलाई आप ही के हाथ में है।"

374 बिद्यमान आपुनि मिथिलेसू। मोर कहब सब भाँति भदेसू॥ 2.296.C7
375 राउर राय रजायसु होई। राउरि सपथ सही सिर सोई॥ 2.296.C8
"आपके और महाराज जनक के होते हुए मेरा कुछ भी कहना अनुचित है। आप दोनों जो आज्ञा देंगे, मैं शपथ लेता हूँ कि उसका पालन करूँगा।"

376 राम सपथ सुनि मुनि जनकु सकुचे सभा समेत। 2.296.D1
377 सकल बिलोकत भरत मुखु बनइ न ऊतरु देत॥ 2.296.D2
उनकी यह शपथ सुनकर सभा सहित मुनि वसिष्ठ और जनक भी सकुचा गए। किसी से कुछ कहते नहीं बना, सब भरत के मुख की ओर देखने लगे।

378 सभा सकुच बस भरत निहारी। राम बंधु धरि धीरजु भारी॥ 2.297.C1
379 करि प्रनामु सब कहँ कर जोरे। रामु राउ गुर साधु निहोरे॥ 2.297.C5
सभा को संकोच के वश में देखकर भरत ने बड़ा धैर्य धारण किया। उन्होंने पहले सबको प्रणाम किया, फिर राम, जनक, गुरु और संतों से विनती की।

380 प्रभु पितु बचन मोह बस पेली। आयउँ इहाँ समाजु सकेली॥ 2.298.C5
381 सोक सनेहँ कि बाल सुभाएँ। आयउँ लाइ रजायसु बाएँ॥ 2.300.C1

"मैं आपके और पिताजी के वचन का मोहवश उल्लंघन करके और सारे समाज को इकट्ठा करके यहाँ चला आया। मैं शोक, स्नेह या बाल स्वभाव से आज्ञा को न मानकर यहाँ आ गया।"

382 तबहुँ कृपाल हेरि निज ओरा। सबहि भाँति भल मानेउ मोरा॥ 2.300.C2
383 कृपासिंधु सनमानि सुबानी। बैठाए समीप गहि पानी॥ 2.301.C7
"हे कृपालु! आपने अपनी ओर देखकर सभी प्रकार से मेरा भला ही माना है।" कृपा के सागर राम ने सुंदर शब्दों के साथ भरत को आदर से हाथ पकड़कर अपने पास बिठाया।

384 करम बचन मानस बिमल तुम्ह समान तुम्ह तात। 2.304.D1
385 गुर समाज लघु बंधु गुन कुसमयँ किमि कहि जात॥ 2.304.D2
प्रभु बोले, "हे तात! कर्म, वचन और मन से निर्मल तुम्हारे समान केवल तुम ही हो। गुरुजनों के समाज में, सब के सामने और इस बुरे समय में, अपने छोटे भाई के गुणों का वर्णन मैं कैसे करूँ?"

386 तुम्हहि बिदित सबही कर करमू। आपन मोर परम हित धरमू॥ 2.305.C3
387 सो तुम्ह करहु करावहु मोहू। तात तरनिकुल पालक होहू॥ 2.306.C3
"हे भरत! तुम्हें सबके कर्तव्यों का तथा मेरे और अपने परम हितकारी धर्म का पता है। तुम भी आज्ञा का पालन करो और मुझ से भी कराओ तथा सूर्यकुल के पालक बनो।"

388 सो बिचारि सहि संकटु भारी। करहु प्रजा परिवारु सुखारी॥ 2.306.C5
389 जानि तुम्हहि मृदु कहउँ कठोरा। कुसमयँ तात न अनुचित मोरा॥ 2.306.C7
"यह सोचकर और भारी संकट सहकर भी प्रजा और परिवार को सुखी करो। हे तात! तुम कोमल हो यह जानते हुए भी मैं कठोर वियोग की बात कह रहा हूँ। बुरे समय में ऐसा होना स्वाभाविक है, मैं कुछ अनुचित नहीं कर रहा।"

390 होहिं कुठायँ सुबंधु सहाए। ओड़िअहिं हाथ असनिहु के घाए॥ 2.306.C8
391 पितु आयसु पालिहिं दुहु भाईं। लोक बेद भल भूप भलाईं॥ 2.315.C4

"बुरे समय में अच्छे भाई ही सहायक होते हैं, वज्र के आघात अपने हाथ से ही रोके जाते हैं। हम दोनों भाई अपने पिता की आज्ञा का पालन करें, क्योंकि राजा की भलाई से ही लोक और वेद में भला होता है।"

392 अस बिचारि सब सोच बिहाई। पालहु अवध अवधि भरि जाई ॥ 2.315.C6
393 बंधु प्रबोधु कीन्ह बहु भाँती। बिनु अधार मन तोषु न साँती ॥ 2.316.C2
"ऐसा विचार करके सब सोच छोड़ दो और मेरे वनवास की अवधि तक अयोध्या का पालन करो।" इस प्रकार उन्होंने भाई को बहुत प्रकार से समझाया। पर बिना कोई सहारा पाए भरत के मन को न तो संतोष हुआ, न ही शांति मिली।

394 प्रभु करि कृपा पाँवरीं दीन्हीं। सादर भरत सीस धरि लीन्हीं ॥ 2.316.C4
395 भरत मुदित अवलंब लहे तें। अस सुख जस सिय रामु रहे तें ॥ 2.316.C8
प्रभु ने कृपा करके भरत को अपनी खड़ाऊँ दीं, जिन्हें भरत ने आदर से अपने सिर पर रख लिया। इस सहारे से वे ऐसे प्रसन्न हुए जैसे साक्षात सीताराम ही मिल गए हों।

396 लखनहि भेंटि प्रनामु करि सिर धरि सिय पद धूरि। 2.318.D1
397 चले सप्रेम असीस सुनि सकल सुमंगल मूरि ॥ 2.318.D2
लक्ष्मण को भेंटकर तथा उन्हें प्रणाम करके, सीता के चरणों की धूलि को सिर पर रखकर, समस्त मंगलों के मूल आशीर्वाद सुनकर वे प्रेम से चल पड़े।

398 हृदयँ रामु सिय लखन समेता। चले जाहिं सब लोग अचेता ॥ 2.320.C7
399 प्रभु गुन ग्राम गनत मन माहीं। सब चुपचाप चले मग जाहीं ॥ 2.322.C2
सब लोग हृदय में सीता, राम और लक्ष्मण को रखकर बड़ी बेसुध सी अवस्था में अयोध्या जा रहे हैं। प्रभु के गुणों का मन ही मन गान करते हुए सब लोग चुपचाप रास्ते पर चले जा रहे हैं।

400 सचिव सुसेवक भरत प्रबोधे। निज निज काज पाइ सिख ओधे ॥ 2.323.C1
401 नंदिगावँ करि परन कुटीरा। कीन्ह निवासु धरम धुर धीरा ॥ 2.324.C2

अयोध्या पहुँचकर भरत ने मंत्रियों और सेवकों को समझाया। वे सब सीख पाकर अपने-अपने कामों में लग गए। धर्म की धुरी को धारण करने में धैर्यवान भरत नन्दिग्राम में पर्णकुटी बनाकर निवास करने लगे।

402 नित पूजत प्रभु पाँवरी प्रीति न हृदयँ समाति। 2.325.D1
403 मागि मागि आयसु करत राज काज बहु भाँति॥ 2.325.D2

वे प्रतिदिन प्रभु की पादुकाओं की पूजा करते हैं, उनके हृदय में प्रेम नहीं समाता। पादुकाओं से आज्ञा माँग-माँगकर वे बहुत प्रकार से राज्य का कामकाज करते हैं।

404 भरत चरित करि नेमु तुलसी जो सादर सुनहिं। 2.326.S1
405 सीय राम पद पेमु अवसि होइ भव रस बिरति॥ 2.326.S2

तुलसीदास कहते हैं जो लोग भरत के चरित्र को नियमपूर्वक आदर से सुनेंगे, उन्हें सीताराम के चरणों में अवश्य ही प्रेम होगा और वे संसार के विषयों से मुक्त होंगे।

अरण्यकाण्ड

406 रघुपति चित्रकूट बसि नाना। चरित किए श्रुति सुधा समाना॥ 3.3.C1
चित्रकूट में रहते हुए रघुनाथ जी ने अनेक चरित्र किए, जो सुनने में अमृत के समान प्रिय हैं।

407 बहुरि राम अस मन अनुमाना। होइहि भीर सबहिं मोहि जाना॥ 3.3.C2
408 सकल मुनिन्ह सन बिदा कराई। सीता सहित चले द्वौ भाई॥ 3.3.C3
कुछ समय बाद राम ने मन में ऐसा अनुमान किया कि सब लोग मुझे जान गए हैं, अब यहाँ बड़ी भीड़ हो जाएगी। अतः सारे ऋषि-मुनियों से विदा लेकर दोनों भाई सीता के साथ वहाँ से चल पड़े।

409 अत्रि के आश्रम जब प्रभु गयऊ। सुनत महामुनि हरषित भयऊ॥ 3.3.C4
410 अनुसुइया के पद गहि सीता। मिली बहोरि सुसील बिनीता॥ 3.5.C1
जब प्रभु अत्रि ऋषि के आश्रम में पहुँचे, समाचार सुनते ही महामुनि बड़े प्रसन्न हुए। सुशील और विनम्र सीता ऋषि-पत्नी अनसूया के चरण छूकर उनसे मिलीं।

411 दिब्य बसन भूषन पहिराए। जे नित नूतन अमल सुहाए॥ 3.5.C3
412 कह रिषिबधू सरस मृदु बानी। नारिधर्म कछु ब्याज बखानी॥ 3.5.C4
अनसूया ने सीता को दिव्य वस्त्र और आभूषण पहनाए, जो नित्य नए स्वच्छ और सुहावने बने रहते हैं। फिर ऋषि-पत्नी ने अपनी कोमल वाणी से स्त्रियों के कुछ धर्म बखानकर कहे।

413 सुनु सीता तव नाम सुमिरि नारि पतिब्रत करहिं। 3.5b.S1
414 तोहि प्रानप्रिय राम कहिउँ कथा संसार हित॥ 3.5b.S2
“हे सीता! सुनो, तुम्हारा तो नाम ही लेकर स्त्रियाँ पतिव्रत धर्म करेंगी। तुम्हें तो राम प्राणों के समान प्रिय हैं, मैंने यह पतिव्रत धर्म की कथा संसार के भले मात्र के लिए कही है।”

415 मुनि पद कमल नाइ करि सीसा। चले बनहि सुर नर मुनि ईसा॥ 3.7.C1
मुनि अत्रि के चरणों में सिर नवाकर, देवता, मनुष्य और ऋषि-मुनियों के स्वामी श्री राम वन को चल दिए।

416 मिला असुर बिराध मग जाता। आवतहीं रघुबीर निपाता॥ 3.7.C6
417 पुनि रघुनाथ चले बन आगे। मुनिबर बृंद बिपुल सँग लागे॥ 3.9.C5
रास्ते में विराध नाम का दैत्य मिला, सामने आते ही राम ने उसे मार डाला। फिर वे वन में आगे चले। कई सारे श्रेष्ठ मुनि उनके साथ हो लिए।

418 अस्थि समूह देखि रघुराया। पूछी मुनिन्ह लागि अति दाया॥ 3.9.C6
419 निसिचर निकर सकल मुनि खाए। मुनि रघुबीर नयन जल छाए॥ 3.9.C8
जब राम ने आगे अस्थियों का एक ढेर देखा, बड़ी दयापूर्वक मुनियों से उसका कारण पूछा। यह जानकर कि राक्षसों के द्वारा मुनियों को मारकर खाने से यह ढेर बना है, राम के नेत्रों में करुणा के आँसू भर आए।

420 निसिचर हीन करउँ महि भुज उठाइ पन कीन्ह। 3.9.D1
421 सकल मुनिन्ह के आश्रमन्हि जाइ जाइ सुख दीन्ह॥ 3.9.D2
अपनी भुजा उठाकर प्रभु ने प्रतिज्ञा की कि मैं पृथ्वी से सारे राक्षसों का नाश कर दूँगा। फिर सारे ऋषि-मुनियों के आश्रमों में जा-जाकर उनको सुख दिया।

422 मुनि अगस्ति कर सिष्य सुजाना। नाम सुतीछन रति भगवाना॥ 3.10.C1
423 मन क्रम बचन राम पद सेवक। सपनेहुँ आन भरोस न देवक॥ 3.10.C2
महर्षि अगस्त्य के सुतीक्ष्ण नाम के एक ज्ञानी शिष्य थे, जिनका भगवान में बड़ा प्रेम था। मन, कर्म और वाणी से वे राम के चरणों के सेवक थे। उन्हें सपने में भी किसी अन्य देवता पर भरोसा नहीं था।

424 कह मुनि प्रभु सुनु बिनती मोरी। अस्तुति करौं कवन बिधि तोरी॥ 3.11.C1
425 जो कोसलपति राजिव नयना। करउ सो राम हृदय मम अयना॥ 3.11.C20
सुतीक्ष्ण बोले, "हे प्रभु! मेरी विनती सुनिए। मैं किस प्रकार आपकी स्तुति करूँ? हे कोसलपति! हे कमलनयन! आप मेरे हृदय में अपना घर बनाएँ।"

426 अनुज जानकी सहित प्रभु चाप बान धर राम। 3.11.D1
427 मम हिय गगन इंदु इव बसहु सदा निहकाम॥ 3.11.D2
"हे प्रभो! अनुज लक्ष्मण और माता सीता के साथ धनुष-बाण धारण किए हुए, मेरे हृदयरूपी आकाश में चन्द्रमा की भाँति स्थिर होकर सदैव निवास करें।"

428 एवमस्तु करि रमानिवासा। हरषि चले कुंभज रिषि पासा॥ 3.12.C1
"ऐसा ही हो" कहकर लक्ष्मीपति राम प्रसन्न होकर अगस्त्य ऋषि के पास चल दिए।

429 अब सो मंत्र देहु प्रभु मोही। जेहि प्रकार मारौं मुनिद्रोही॥ 3.13.C3
430 मुनि मुसुकाने सुनि प्रभु बानी। पूछेहु नाथ मोहि का जानी॥ 3.13.C4
वहाँ पहुँचकर राम बोले, "हे प्रभो! कृपया मुझे सलाह दें, मैं किस प्रकार ऋषि-मुनियों के द्रोही राक्षसों का नाश करूँ?" प्रभु की वाणी सुनकर मुनि मुस्कराकर बोले, "हे नाथ! आपने क्या सोचकर मुझसे यह प्रश्न किया है?"

431 ते तुम्ह सकल लोकपति साईं। पूँछेहु मोहि मनुज की नाईं॥ 3.13.C9
432 संतत दासन्ह देहु बड़ाई। तातें मोहि पूँछेहु रघुराई॥ 3.13.C14
"आप तो सारे लोकपतियों के स्वामी हैं, किन्तु मुझसे एक साधारण मनुष्य की तरह पूछ रहे हैं। आप सदा अपने सेवकों को बड़प्पन देते हैं, इसीलिए हे राम! आपने मुझसे यह पूछा है।"

433 है प्रभु परम मनोहर ठाऊँ। पावन पंचबटी तेहि नाऊँ॥ 3.13.C15
434 दंडक बन पुनीत प्रभु करहू। उग्र साप मुनिबर कर हरहू॥ 3.13.C16
"हे प्रभु! इस दण्डकवन में एक मनोहर और पवित्र जगह है, जिसका नाम पंचवटी है। यह वन श्रेष्ठ मुनि गौतम ऋषि के भयंकर शाप से ग्रसित है। आप उस शाप को हर के इस वन को पवित्र कीजिए।"

435 बास करहु तहँ रघुकुल राया। कीजे सकल मुनिन्ह पर दाया॥ 3.13.C17
436 चले राम मुनि आयसु पाई। तुरतहिं पंचबटी निअराई॥ 3.13.C18

"हे रघुकुल के स्वामी! आप वहाँ निवास करके सारे ऋषि-मुनियों पर दया करें।" मुनि की आज्ञा लेकर राम वहाँ से चल पड़े और शीघ्र ही पंचवटी के निकट पँहुच गए।

437 गीधराज सैं भेंट भइ बहु बिधि प्रीति बढ़ाइ। 3.13.D1
438 गोदावरी निकट प्रभु रहे परन गृह छाइ॥ 3.13.D2

वहाँ गृध्रराज जटायु से भेंट हुई। उनके साथ बहुत प्रकार से प्रेम बढ़ाकर वे गोदावरी नदी के पास पर्णकुटी बनाकर रहने लगे।

439 सूपनखा रावन कै बहिनी। दुष्ट हृदय दारुन जस अहिनी॥ 3.17.C3
440 पंचबटी सो गइ एक बारा। देखि बिकल भइ जुगल कुमारा॥ 3.17.C4

शूर्पणखा नामक रावण की एक बहिन थी, जो नागिन जैसी भयंकर और दुष्ट हृदयवाली थी। एक बार वह पंचवटी गई और दोनों भाइयों को देखकर कामवासना से विचलित हो गई।

441 रुचिर रूप धरि प्रभु पहिं जाई। बोली बचन बहुत मुसुकाई॥ 3.17.C7
442 तुम्ह सम पुरुष न मो सम नारी। यह सँजोग बिधि रचा बिचारी॥ 3.17.C8

माया से आकर्षक रूप धरकर वह राम के पास गई और मुस्कराकर बोली, "न तो तुम्हारे समान कोई सुंदर पुरुष है, न ही मेरे समान कोई सुंदर स्त्री। लगता है विधाता ने हमारी जोड़ी बहुत सोच-समझकर बनाई है।"

443 सीतहि चितइ कही प्रभु बाता। अहइ कुआर मोर लघु भ्राता॥ 3.17.C11

सीता की ओर देखकर प्रभु ने कहा, "मैं तो विवाहित हूँ, पर मेरा छोटा भाई कुमार (वन में अकेला) है।"

444 गइ लछिमन रिपु भगिनी जानी। प्रभु बिलोकि बोले मृदु बानी॥ 3.17.C12
445 सुंदरि सुनु मैं उन्ह कर दासा। पराधीन नहिं तोर सुपासा॥ 3.17.C13

तब वह लक्ष्मण के पास गई। उसे शत्रु रावण की बहिन जानकर, लक्ष्मण प्रभु की ओर देखकर कोमल वचन बोले, "हे सुंदरी! मैं तो उनका दास हूँ, उनके अधीन हूँ, मुझसे ब्याह करके तुम्हें सुख नहीं मिलेगा।"

446 पुनि फिरि राम निकट सो आई। प्रभु लछिमन पहिं बहुरि पठाई॥ 3.17.C17
447 लछिमन कहा तोहि सो बरई। जो तृन तोरि लाज परिहरई॥ 3.17.C18
लौटकर फिर वह राम के पास गई, प्रभु ने फिर उसे लक्ष्मण के पास भेज दिया। लक्ष्मण बोले, "तुझे वही ब्याहेगा, जिसने लज्जा तिनके के समान तोड़कर त्याग दी हो।"

448 तब खिसिआनि राम पहिं गई। रूप भयंकर प्रगटत भई॥ 3.17.C19
449 सीतहि सभय देखि रघुराई। कहा अनुज सन सयन बुझाई॥ 3.17.C20
तब वह खिसियाकर राम के पास गई और वहाँ उसने अपना असली भयंकर रूप प्रकट किया। सीता को डरा हुआ देखकर राम ने भाई लक्ष्मण को संकेत दिया।

450 लछिमन अति लाघवँ सो नाक कान बिनु कीन्हि। 3.17.D1
451 ताके कर रावन कहँ मनौ चुनौती दीन्हि॥ 3.17.D2
लक्ष्मण ने बड़ी फुर्ती से उसके नाक-कान काट लिए। मानो उसके माध्यम से रावण को चुनौती भेज रहे हों।

452 नाक कान बिनु भइ बिकरारा। जनु स्रव सैल गेरु कै धारा॥ 3.18.C1
453 खर दूषन पहिं गइ बिलपाता। धिग धिग तव पौरुष बल भ्राता॥ 3.18.C2
बिना नाक-कान की शूर्पणखा बहुत विकराल लगने लगी। उसके शरीर से खून ऐसे बह रहा था जैसे किसी काले पर्वत से गेरू की धारा बह रही हो। रोती-रोती वह खर-दूषण के पास गई और बोली, "भाइयो! तुम्हारी वीरता और बल को धिक्कार है।"

454 तेहिं पूछा सब कहेसि बुझाई। जातुधान सुनि सेन बनाई॥ 3.18.C3
455 धूरि पूरि नभ मंडल रहा। राम बोलाइ अनुज सन कहा॥ 3.18.C10
उनके पूछने पर शूर्पणखा ने सारी बात समझाकर बताई। सुनकर खर-दूषण सेना लेकर चल दिए। सारा आकाश धूल से भर गया। तब राम ने भाई लक्ष्मण से कहा,

456 लै जानकिहि जाहु गिरि कंदर। आवा निसिचर कटकु भयंकर॥ 3.18.C11
457 देखि राम रिपुदल चलि आवा। बिहसि कठिन कोदंड चढ़ावा॥ 3.18.C13

"राक्षसों की भयंकर सेना आ रही है, तुम सीता को लेकर पर्वत की कंदरा में चले जाओ।" जब शत्रुओं की सेना पास आ गई, राम हँसकर अपना कठोर धनुष चढ़ाकर राक्षसों से युद्ध करने लगे।

458 राम राम कहि तनु तजहिं पावहिं पद निर्बान। 3.20a.D1
459 करि उपाय रिपु मारे छन महुँ कृपानिधान॥ 3.20a.D2

राम-राम कहते हुए राक्षस शरीर छोड़ देते हैं और मोक्ष पाते हैं। इस प्रकार कृपानिधान राम ने उपाय करके क्षण भर में शत्रुओं को मार गिराया।

460 धुआँ देखि खरदूषन केरा। जाइ सुपनखाँ रावन प्रेरा॥ 3.21.C5
461 बोली बचन क्रोध करि भारी। देस कोस कै सुरति बिसारी॥ 3.21.C6

खर-दूषण का विनाश देखकर शूर्पणखा ने लंका में जाकर रावण को उकसाया। वह बड़े क्रोध से बोली कि लगता है तुमने देश और खजाने की सुधि ही भुला दी है।

462 कह लंकेस कहसि निज बाता। केइँ तव नासा कान निपाता॥ 3.22.C2
463 अवध नृपति दसरथ के जाए। पुरुष सिंघ बन खेलन आए॥ 3.22.C3

लंकापति रावण ने पूछा, "तू अपनी बात कह, तेरे नाक-कान किसने काट डाले?" वह बोली, "अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र, जो पुरुषों में सिंह के समान हैं, दंडकवन में शिकार खेलने आए हैं।"

464 सोभा धाम राम अस नामा। तिन्ह के संग नारि एक स्यामा॥ 3.22.C8
465 तासु अनुज काटे श्रुति नासा। सुनि तव भगिनि करहिं परिहासा॥ 3.22.C10

"वे शोभा के धाम हैं, उनका नाम राम है। उनके साथ एक सुंदर तरुणी स्त्री भी है। उनके छोटे भाई लक्ष्मण ने मेरे नाक-कान काट डाले। मैं तुम्हारी बहिन हूँ, यह सुनकर वे मेरी हँसी करने लगे।"

466 सूपनखहि समुझाइ करि बल बोलेसि बहु भाँति। 3.22.D1
467 गयउ भवन अति सोचबस नीद परइ नहिं राति॥ 3.22.D2

शूर्पणखा को समझाकर और अपने बल का बखानकर रावण अपने महल में चला गया। अत्यंत चिंता के मारे उसे पूरी रात नींद नहीं आई।

468 सुर रंजन भंजन महि भारा। जौं भगवंत लीन्ह अवतारा॥ 3.23.C3
469 तौ मैं जाइ बैरु हठि करऊँ। प्रभु सर प्रान तजें भव तरऊँ॥ 3.23.C4
वह सोचने लगा देवताओं को आनंद देनेवाले और पृथ्वी का भार दूर करनेवाले भगवान ने ही यदि अवतार लिया है तो मैं उनसे अवश्य शत्रुता करूँगा और उनके बाण से प्राण छोड़कर भवसागर से पार हो जाऊँगा।

470 इहाँ राम जसि जुगुति बनाई। सुनहु उमा सो कथा सुहाई॥ 3.23.C8
शिव जी कहते हैं, "हे पार्वती! यहाँ श्री रामचन्द्र ने एक योजना बनाई, उस सुन्दर कथा को सुनो।"

471 सुनहु प्रिया ब्रत रुचिर सुसीला। मैं कछु करबि ललित नरलीला॥ 3.24.C1
472 तुम्ह पावक महुँ करहु निवासा। जौ लगि करौं निसाचर नासा॥ 3.24.C2
एक दिन राम सीता से बोले, "हे प्रिये! सुन्दर पतिव्रत करने वाली सुशीला, मैं अब कुछ सुन्दर नर लीला करूँगा। जब तक मैं सारे राक्षसों का नाश करूँ, तुम अग्नि में निवास करो।"

473 जबहिं राम सब कहा बखानी। प्रभु पद धरि हियँ अनल समानी॥ 3.24.C3
474 निज प्रतिबिंब राखि तहँ सीता। तैसइ सील रूप सुबिनीता॥ 3.24.C4
इस प्रकार जब राम ने पूरी योजना समझाई, सीता ने प्रभु के चरणों को हृदय में रख अग्नि में प्रवेश किया। उन्होंने अपनी छाया वहाँ छोड़ दी, जो शील, रूप और विनय में उनके समान ही थी।

475 दसमुख गयउ जहाँ मारीचा। नाइ माथ स्वारथ रत नीचा॥ 3.24.C6
476 होहु कपट मृग तुम्ह छलकारी। जेहि बिधि हरि आनौं नृपनारी॥ 3.25.C2
फिर पूरी योजना बनाकर, स्वार्थ से लिप्त नीच रावण अपने मामा मारीच के पास गया और सिर नवाकर बोला, "तुम छल करनेवाले नकली मृग बनो जिससे मैं राजवधू सीता का हरण कर सकूँ।"

477 तेहि बन निकट दसानन गयऊ। तब मारीच कपटमृग भयऊ॥ 3.27.C1
478 सीता परम रुचिर मृग देखा। अंग अंग सुमनोहर बेषा॥ 3.27.C3

तब रावण उस वन के निकट गया जहाँ राम की कुटिया थी। मारीच कपट से सोने का हिरन बन गया। सीता ने अत्यंत सुंदर हिरन को देखा, जिसके अंग-अंग मन को हरनेवाले थे।

479 सत्यसंध प्रभु बधि करि एही। आनहु चर्म कहति बैदेही॥ 3.27.C5
480 प्रभुहि बिलोकि चला मृग भाजी। धाए रामु सरासन साजी॥ 3.27.C10
वे राम से बोलीं, "हे सत्यप्रतिज्ञ प्रभु! इस हिरन को मारकर उसका चमड़ा ला दीजिए।" तब राम हिरन के पीछे दौड़े। प्रभु को देखकर मृग आगे-आगे भाग चला। राम भी धनुष पर बाण चढ़ाकर उसके पीछे-पीछे दौड़े।

481 प्रगटत दुरत करत छल भूरी। एहि बिधि प्रभुहि गयउ लै दूरी॥ 3.27.C13
482 तब तकि राम कठिन सर मारा। धरनि परेउ करि घोर पुकारा॥ 3.27.C14
इस प्रकार प्रकट होते, छिपते और अन्य छल करते हुए वह मृग प्रभु को काफी दूर ले गया। तब राम ने निशाना साधकर उसे कठोर बाण मारा। बाण के लगते ही वह जोर से 'हे लक्ष्मण, हे लक्ष्मण' की घोर पुकार करता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा।

483 बिपुल सुमन सुर बरषहिं गावहिं प्रभु गुन गाथ। 3.27.D1
484 निज पद दीन्ह असुर कहुँ दीनबंधु रघुनाथ॥ 3.27.D2
देवतागण प्रभु के गुणों की गाथा गाते-गाते बहुत-से फूल बरसाने लगे। दीनों के बंधु श्री राम ने उस मारीच जैसे राक्षस को भी अपना परम धाम दे दिया।

485 आरत गिरा सुनी जब सीता। कह लछिमन सन परम सभीता॥ 3.28.C2
486 जाहु बेगि संकट अति भ्राता। लछिमन बिहसि कहा सुनु माता॥ 3.28.C3
उधर सीता ने जब दु:ख भरी आवाज सुनी, तो भयभीत होकर लक्ष्मण से कहा, "तुम शीघ्र ही जाओ, तुम्हारे भाई घोर संकट में हैं।" लक्ष्मण ने हँसकर कहा, "हे माता! सुनो!"

487 भृकुटि बिलास सृष्टि लय होई। सपनेहुँ संकट परइ कि सोई॥ 3.28.C4
488 मरम बचन जब सीता बोला। हरि प्रेरित लछिमन मन डोला॥ 3.28.C5

"जिन की भौंह के इशारे मात्र से सारी सृष्टि का नाश होता है, उन पर क्या सपने में भी कोई संकट आ सकता है?" तब सीता ने हृदय में चुभनेवाली कुछ मार्मिक बातें कहीं, जिससे प्रभु की प्रेरणा से लक्ष्मण का मन विचलित हो गया।

489 बन दिसि देव सौंपि सब काहू। चले जहाँ रावन ससि राहू॥ 3.28.C6
490 सून बीच दसकंधर देखा। आवा निकट जती कें बेषा॥ 3.28.C7
सीता को वन और दिशाओं के देवताओं को सौंपकर लक्ष्मण वहाँ चले जहाँ रावण जैसे चन्द्रमा को निगलनेवाले राहु के समान राम थे। इस बीच सूना आश्रम देखकर रावण संन्यासी के वेश में सीता के पास आया।

491 नाना बिधि करि कथा सुहाई। राजनीति भय प्रीति देखाई॥ 3.28.C11
492 कह सीता सुनु जती गोसाईं। बोलेहु बचन दुष्ट की नाईं॥ 3.28.C12
उसने तरह-तरह की सुंदर कहानियाँ कहकर सीता को राजनीति, भय और प्रेम दिखलाया। सीता बोलीं, "हे यति गोसाई! सुनो, तुम दुष्ट की तरह बोल रहे हो।"

493 क्रोधवंत तब रावन लीन्हिसि रथ बैठाइ। 3.28.D1
494 चला गगनपथ आतुर भयँ रथ हाँकि न जाइ॥ 3.28.D2
तब क्रोधित होकर रावण ने सीता को अपने रथ में बिठा लिया और आकाश के रास्ते बड़ी उतावली से चला, किन्तु भयवश उससे रथ हाँका नहीं जा रहा था।

495 बिबिध बिलाप करति बैदेही। भूरि कृपा प्रभु दूरि सनेही॥ 3.29.C4
सीता विलाप करती हुई बोलीं कि मुझ पर प्रभु की कृपा तो बहुत है, पर वे स्नेही अब दूर रह गए।

496 गीधराज सुनि आरत बानी। रघुकुलतिलक नारि पहिचानी॥ 3.29.C7
497 धावा क्रोधवंत खग कैसें। छूटइ पबि परबत कहुँ जैसें॥ 3.29.C10
गृध्रराज जटायु ने उनकी दु:ख भरी आवाज सुनकर पहचान लिया कि ये तो रघुकुल तिलक राम की पत्नी हैं। तब क्रोधित होकर वह पक्षीराज वैसे ही दौड़ा जैसे पर्वत की ओर वज्र छूटता हो।

498 तब सक्रोध निसिचर खिसिआना। काढ़ेसि परम कराल कृपाना॥ 3.29.C21
499 काटेसि पंख परा खग धरनी। सुमिरि राम करि अद्भुत करनी॥ 3.29.C22
तब खिसियाए हुए रावण ने क्रोध में आकर अपनी अत्यंत भयानक तलवार चन्द्रहास से उसके पंख काट डाले। प्रभु राम की अद्भुत लीला का स्मरण करते हुए जटायु पृथ्वी पर गिर पड़ा।

500 सीतहि जान चढ़ाइ बहोरी। चला उताइल त्रास न थोरी॥ 3.29.C23
सीता को फिर से रथ पर चढ़ाकर रावण वहाँ से बड़ी तेजी से चल दिया, क्योंकि उसके मन में अभी भी बहुत भय था।

501 गिरि पर बैठे कपिन्ह निहारी। कहि हरि नाम दीन्ह पट डारी॥ 3.29.C25
502 एहि बिधि सीतहि सो लै गयऊ। बन असोक महँ राखत भयऊ॥ 3.29.C26
रास्ते में एक पर्वत पर बैठे हुए बंदरों को देखकर, सीता ने प्रभु का नाम लेकर नीचे वस्त्र डाल दिया। इस प्रकार रावण सीता को हर ले गया और उन्हें अशोकवन में जा रखा।

503 जेहि बिधि कपट कुरंग सँग धाइ चले श्रीराम। 3.29b.D1
504 सो छबि सीता राखि उर रटति रहति हरिनाम॥ 3.29b.D2
जिस रूप में प्रभु राम कपट-मृग के साथ दौड़े थे, उसी रूप को हृदय में रखकर सीता वहाँ राम नाम रटती रहती हैं।

505 आश्रम देखि जानकी हीना। भए बिकल जस प्राकृत दीना॥ 3.30.C6
506 लछिमन समुझाए बहु भाँती। पूछत चले लता तरु पाँती॥ 3.30.C8
उधर दोनों भाई जब आश्रम में लौटे, सीता को वहाँ न देखकर, राम एक साधारण मनुष्य की तरह बड़े व्याकुल हो गए। लक्ष्मण ने उन्हें बहुत प्रकार से समझाया, पर वे लताओं और वृक्षों तक से सीता के बारे में पूछते हुए आगे चले।

507 आगें परा गीधपति देखा। सुमिरत राम चरन जिन्ह रेखा॥ 3.30.C18
508 तब कह गीध बचन धरि धीरा। सुनहु राम भंजन भव भीरा॥ 3.31.C1

आगे उन्होंने गृध्रपति जटायु को पड़ा देखा, जो राम के उन चरणों का स्मरण कर रहा था, जिनमें उनके ईश्वरीय चिह्न हैं। जटायु ने धैर्य से उनसे कहा, "हे जन्म-मृत्यु के भय का नाश करनेवाले प्रभु राम! सुनिए।"

509 नाथ दसानन यह गति कीन्ही। तेहिं खल जनकसुता हरि लीन्ही॥ 3.31.C2
510 दरस लागि प्रभु राखेउँ प्राना। चलन चहत अब कृपानिधाना॥ 3.31.C4
"मेरी यह दशा दुष्ट रावण ने की है, जो सीता जी को हरकर ले गया है। हे कृपानिधान! मैंने आपके दर्शन मात्र के लिए ही अब तक प्राण रोक रखे हैं, अब ये चलना चाहते हैं।"

511 जल भरि नयन कहहिं रघुराई। तात कर्म निज तें गति पाई॥ 3.31.C8
512 परहित बस जिन्ह के मन माहीं। तिन्ह कहुँ जग दुर्लभ कछु नाहीं॥ 3.31.C9
नेत्रों में जल भरकर रघुनाथ कहने लगे, "हे तात! आपने अपने कर्म से अच्छी गति पाई है। जिनके मन में दूसरों का हित रहता है, संसार में उन्हें कुछ भी दुर्लभ नहीं है।"

513 तनु तजि तात जाहु मम धामा। देउँ काह तुम्ह पूरनकामा॥ 3.31.C10
514 ताहि देइ गति राम उदारा। सबरी कें आश्रम पगु धारा॥ 3.34.C5
"हे तात! शरीर छोड़कर आप मेरे धाम को जाइए। मैं आपको क्या दूँ, आप तो स्वयं पूर्णकाम हैं।" उसे उत्तम गति देकर, उदार राम शबरी के आश्रम में जा पहुँचे।

515 कंद मूल फल सुरस अति दिए राम कहुँ आनि। 3.34.D1
516 प्रेम सहित प्रभु खाए बारंबार बखानि॥ 3.34.D2
शबरी ने रस भरे स्वादिष्ट कंद, मूल और फल लाकर राम को दिए। बार-बार प्रशंसा करते हुए प्रभु ने उनको बड़े प्रेम से खाया।

517 केहि बिधि अस्तुति करौं तुम्हारी। अधम जाति मैं जड़मति भारी॥ 3.35.C2
शबरी बोली, "मैं किस प्रकार से आपकी स्तुति करूँ? मैं नीच जाति की और अत्यंत जड़बुद्धि हूँ।"

518 कह रघुपति सुनु भामिनि बाता। मानउँ एक भगति कर नाता॥ 3.35.C4
519 नवधा भगति कहउँ तोहि पाहीं। सावधान सुनु धरु मन माहीं॥ 3.35.C7
रघुनाथ बोले, "हे भामिनी! मेरी बात ध्यान से सुनो। मैं तो मात्र एक भक्ति का ही नाता मानता हूँ। मैं तुम्हें अब नवधा भक्ति का ज्ञान देता हूँ। इसे सावधान होकर सुनो और अपने मन में रखो।"

520 नव महुँ एकउ जिन्ह कें होई। नारि पुरुष सचराचर कोई॥ 3.36.C6
521 सोइ अतिसय प्रिय भामिनि मोरें। सकल प्रकार भगति दृढ़ तोरें॥ 3.36.C7
"इन नौ भक्तियों में से जिनके पास एक भी होती है, वह जड़-चेतन, स्त्री-पुरुष, कोई भी हो, हे भामिनी! मुझे अतिशय प्रिय है। तुम तो सभी प्रकार की भक्तियों से युक्त हो।"

522 जनकसुता कइ सुधि भामिनी। जानहि कहु करिबरगामिनी॥ 3.36.C10
523 पंपा सरहि जाहु रघुराई। तहँ होइहि सुग्रीव मिताई॥ 3.36.C11
"हे भामिनी! अब यदि तुम गजगामिनी सीता के बारे में कुछ जानती हो तो बताओ।" शबरी बोली, "हे रघुवीर! आप पम्पा नामक सरोवर को जाइए। वहाँ आपकी मित्रता वानरों के राजा सुग्रीव से होगी, वे सब जानकारी देंगे।"

524 जाति हीन अघ जन्म महि मुक्त कीन्हि असि नारि। 3.36.D1
525 महामंद मन सुख चहसि ऐसे प्रभुहि बिसारि॥ 3.36.D2
तुलसीदास कहते हैं जो नीच जाति और पापों की जन्मभूमि थी, ऐसी स्त्री को भी जिन्होंने मुक्त कर दिया, हे महामंद मन! ऐसे प्रभु को भूलकर तू सुख चाहता है!

किष्किन्धाकाण्ड

526 आगें चले बहुरि रघुराया। रिष्यमूक पर्बत निअराया॥ 4.1.C1
रघुनाथ जी फिर आगे चले और ऋष्यमूक पर्वत के पास पहुँचे।

527 तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा। आवत देखि अतुल बल सींवा॥ 4.1.C2
528 अति सभीत कह सुनु हनुमाना। पुरुष जुगल बल रूप निधाना॥ 4.1.C3
वहाँ वानरों के राजा सुग्रीव अपने मंत्रियों के साथ रहते थे। अतुलित बलशाली राम और लक्ष्मण को आते देखकर सुग्रीव डर गए और बोले, "हे हनुमान! ये दोनों पुरुष रूप और बल के भण्डार हैं।"

529 धरि बटु रूप देखु तैं जाई। कहेसु जानि जियँ सयन बुझाई॥ 4.1.C4
"तुम ब्रह्मचारी के रूप में जाकर देखो और उनके मन के भावों को समझकर मुझे सूचित करो।"

530 बिप्र रूप धरि कपि तहँ गयऊ। माथ नाइ पूछत अस भयऊ॥ 4.1.C6
531 को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा। छत्री रूप फिरहु बन बीरा॥ 4.1.C7
हनुमान ब्राह्मण के रूप में राम के पास गए और सिर झुकाकर पूछने लगे, "हे वीर! साँवले और गोरे शरीरवाले तथा क्षत्रिय के रूप में वन में घूमनेवाले, आप कौन हैं?"

532 जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार। 4.1.D1
533 की तुम्ह अखिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार॥ 4.1.D2
"क्या आप जगत के कारण और सम्पूर्ण लोकों के स्वामी स्वयं भगवान हैं, जिन्होंने लोगों को भवसागर पार उतारने और पृथ्वी का भार कम करने के लिए मनुष्य का अवतार लिया है?"

534 कोसलेस दसरथ के जाए। हम पितु बचन मानि बन आए॥ 4.2.C1
राम बोले, "हम कोसल देश के राजा दशरथ के पुत्र हैं और उनका वचन मानकर यहाँ वन में आए हैं।"

535 नाम राम लछिमन दोउ भाई। संग नारि सुकुमारि सुहाई॥ 4.2.C2
536 इहाँ हरी निसिचर बैदेही। बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही॥ 4.2.C3
"हम दोनों भाई हैं, हमारे नाम राम और लक्ष्मण हैं। हमारे साथ सुंदर सुकुमारी मेरी पत्नी थी, जिसका नाम वैदेही है। राक्षसों ने उसका यहाँ अपहरण कर लिया है। हे विप्र! हम उसे ही ढूँढ़ते फिर रहे हैं।"

537 प्रभु पहिचानि परेउ गहि चरना। सो सुख उमा जाइ नहिं बरना॥ 4.2.C5
538 पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदयँ निज नाथहि चीन्ही॥ 4.2.C7
अपने प्रभु को पहचानकर हनुमान उनके चरणों में गिर गए। शिव जी कहते हैं, "हे पार्वती! उस सुख का वर्णन नहीं किया जा सकता।" फिर धैर्य रखकर हनुमान ने उनकी स्तुति की। अपने नाथ को पहचानकर उनके हृदय में अत्यंत हर्ष हुआ।

539 मोर न्याउ मैं पूछा साईं। तुम्ह पूछहु कस नर की नाईं॥ 4.2.C8
540 नाथ सैल पर कपिपति रहई। सो सुग्रीव दास तव अहई॥ 4.4.C2
हनुमान बोले, "हे स्वामी! मैं आपको पहचान नहीं सका, इसलिए मेरा पूछना तो न्यायसंगत था, किन्तु आप एक साधारण मनुष्य की तरह कैसे पूछ रहे हैं? हे नाथ! इस पर्वत पर वानरों के स्वामी सुग्रीव रहते हैं, जो आपके दास हैं।"

541 तेहि सन नाथ मयत्री कीजे। दीन जानि तेहि अभय करीजे॥ 4.4.C3
542 जब सुग्रीवँ राम कहुँ देखा। अतिसय जन्म धन्य करि लेखा॥ 4.4.C6
"आप उनसे मित्रता करें और दीन जानकर उन्हें निर्भय कर दीजिए।" मिलने पर जब सुग्रीव ने राम को देखा तो उसने अपने जन्म को अत्यंत धन्य माना।

543 तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुनाइ। 4.4.D1
544 पावक साखी देइ करि जोरी प्रीति दृढ़ाइ॥ 4.4.D2
हनुमान ने दोनों ओर की सब कथा सुनाई और अग्नि की साक्षी में उनमें दृढ़ मैत्री करवा दी।

545 नाथ बालि अरु मैं द्वौ भाई। प्रीति रही कछु बरनि न जाई॥ 4.6.C1
546 रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी। हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी॥ 4.6.C11

सुग्रीव बोले, "हे नाथ! मैं और बालि दो भाई हैं। हम दोनों में ऐसा प्रेम था जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। एक गलतफहमी के कारण उसी भाई ने शत्रु की तरह मुझे बहुत मारा। मेरा सब कुछ यहाँ तक कि मेरी पत्नी को भी छीन लिया।"

547 ताकें भय रघुबीर कृपाला। सकल भुवन मैं फिरेउँ बिहाला ॥ 4.6.C12
548 लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चाप सायक गहि हाथा ॥ 4.7.C25
"हे कृपालु रघुवीर! मैं उसके भय से सारे लोकों में बेहाल हो भागता फिर रहा हूँ।" सुग्रीव की बात सुनकर और उसे साथ लेकर, राम हाथ में धनुष-बाण लेकर चल पड़े।

549 सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहि कर चरन नारि समुझावा ॥ 4.7.C27
550 भिरे उभौ बाली अति तर्जा। मुठिका मारि महाधुनि गर्जा ॥ 4.8.C2
सुग्रीव की ललकार सुनते ही बालि क्रोधित होकर दौड़ा। उसकी पत्नी तारा ने चरण पकड़कर युद्ध नहीं करने के लिए उसे बहुत समझाया पर उसने एक न मानी। बालि और सुग्रीव दोनों भिड़ गए। बालि ने सुग्रीव को बहुत धमकाया और उसे घूँसा मारकर बड़ी जोर से गर्जना की।

551 तब सुग्रीव बिकल होइ भागा। मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा ॥ 4.8.C3
552 मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बंधु न होइ मोर यह काला ॥ 4.8.C4
घूँसे की चोट सुग्रीव को वज्र जैसी लगी और वह व्याकुल होकर भागा। राम के पास आकर सुग्रीव ने कहा, "हे कृपालु रघुवीर! मैंने आपको पहले ही कहा था कि यह भाई नहीं, मेरा काल है।"

553 एकरूप तुम्ह भ्राता दोऊ। तेहि भ्रम तें नहिं मारेउँ सोऊ ॥ 4.8.C5
554 मेली कंठ सुमन कै माला। पठवा पुनि बल देइ बिसाला ॥ 4.8.C7
राम उसे सांत्वना देते हुए बोले, "तुम दोनों भाई एक जैसे लगते हो, इस भ्रम के कारण मैंने बालि को नहीं मारा।" फिर सुग्रीव के गले में फूलों की माला डालकर, उसका आत्मविश्वास बढ़ा कर, उसे फिर से लड़ने के लिए भेजा।

555 बहु छल बल सुग्रीव कर हियँ हारा भय मानि । 4.8.D1
556 मारा बालि राम तब हृदय माझ सर तानि ॥ 4.8.D2

सुग्रीव ने बहुतेरे छल-बल किए, किन्तु अंत में वह भय के कारण हृदय से हारने लगा। तब राम ने तानकर बालि के हृदय में एक बाण मारकर उसे धरती पर गिरा दिया।

557 धर्म हेतु अवतरेहु गोसाईं। मारेहु मोहि ब्याध की नाईं ॥ 4.9.C5
558 मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कवन नाथ मोहि मारा ॥ 4.9.C6

बालि बोला, "हे प्रभु! आपने धर्म की रक्षा के लिए अवतार लिया है, फिर मुझे व्याध की तरह छिपकर क्यों मारा? मैं शत्रु और सुग्रीव प्यारा? हे नाथ! मेरे किस अवगुण के कारण आपने मुझे मारा है?"

559 अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी ॥ 4.9.C7
560 इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जोई। ताहि बधें कछु पाप न होई ॥ 4.9.C8

राम बोले, "अरे शठ! छोटे भाई की पत्नी, बहिन, पुत्र की पत्नी और अपनी पुत्री, ये चारों एक समान हैं। इनको यदि कोई बुरी नजर से देखता है तो उसे मारने में कोई पाप नहीं होता।"

561 सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि। 4.9.D1
562 प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि ॥ 4.9.D2

बालि बोला, "हे राम! स्वामी के सामने मेरी कोई चतुराई नहीं चली। अंत समय में आपकी शरण पाकर भी क्या मैं पापी रहा?"

563 राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग। 4.10.D1
564 सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग ॥ 4.10.D2

श्री राम के चरणों में दृढ़ प्रीति रखकर बालि ने अपना शरीर वैसे ही छोड़ दिया, जैसे हाथी को अपने गले से फूलों की माला के गिरने का आभास तक नहीं होता।

565 लछिमन तुरत बोलाए पुरजन बिप्र समाज। 4.11.D1
566 राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अंगद कहँ जुबराज ॥ 4.11.D2

राम की आज्ञा होने पर लक्ष्मण ने तुरंत नगर के लोगों और ब्राह्मणों को बुलाकर सुग्रीव को राज्य दिया और अंगद को युवराज बनाया।

567 जब सुग्रीव भवन फिरि आए। रामु प्रबरषन गिरि पर छाए॥ 4.12.C10
568 इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा। राम काजु सुग्रीवँ बिसारा॥ 4.19.C1
राज्य पाकर सुग्रीव अपने महल में चले आए। वर्षा ऋतु आने के कारण राम प्रवर्षण पर्वत पर रहने गए। कुछ समय बीतने के बाद हनुमान को लगा कि सुग्रीव प्रभु राम का कार्य भूल गए हैं।

569 निकट जाइ चरनन्हि सिरु नावा। चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा॥ 4.19.C2
अतः सुग्रीव के पास जाकर और उनके चरणों में सिर झुकाकर, हनुमान ने उन्हें चारों (साम, दाम, दण्ड, भेद) प्रकार से समझाया।

570 सुनि सुग्रीवँ परम भय माना। बिषयँ मोर हरि लीन्हेउ ग्याना॥ 4.19.C3
571 अब मारुतसुत दूत समूहा। पठवहु जहँ तहँ बानर जूहा॥ 4.19.C4
बात सुनकर सुग्रीव अत्यंत डर गए और बोले, "विषयों ने मेरे ज्ञान को हर लिया है। हे हनुमान! जहाँ-जहाँ वानरों के समूह रहते हैं, वहाँ-वहाँ दूतों को भेजकर उनको बुलाओ।"

572 राम काजु अरु मोर निहोरा। बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा॥ 4.22.C6
573 जनकसुता कहुँ खोजहु जाई। मास दिवस महँ आएहु भाई॥ 4.22.C7
वानरों की विशाल सेना एकत्रित होने पर सुग्रीव ने कहा, "इसे श्री रामचन्द्र का कार्य और मेरा अनुरोध समझकर चारों ओर जाओ। हे भाइयो, राजा जनक की पुत्री सीता की खोज करके एक मास में लौट आना।"

574 सुनहु नील अंगद हनुमाना। जामवंत मतिधीर सुजाना॥ 4.23.C1
575 सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू। सीता सुधि पूँछेहु सब काहू॥ 4.23.C2
"हे धीरबुद्धि और चतुर नील, अंगद, हनुमान, जामवंत! आप सब योद्धा दक्षिण दिशा की ओर जाओ और सबसे सीता का पता पूछो।"

576 पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा ॥ 4.23.C9
577 परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी ॥ 4.23.C10
सबके बाद हनुमान ने प्रणाम किया। यह जानकर कि उनके हाथों मेरा काम होगा, प्रभु ने हनुमान को अपने पास बुलाया। उन्होंने अपना करकमल हनुमान के सिर पर फेरा और अपना सेवक जान अपने हाथ की अँगूठी दी।

578 चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह। 4.23.D1
579 राम काज लयलीन मन बिसरा तन कर छोह ॥ 4.23.D2
सारे वानर वन, नदी, तालाब, पर्वत और पर्वतों की कंदराओं में सीता की खोज करने लगे। वे रामकाज में इतने तल्लीन थे कि अपने शरीर का मोह भी भूल गए।

580 इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं ॥ 4.26.C1
समय बीतने पर वानर विचार करने लगे कि दिया हुआ समय तो निकल गया, पर अभी तक काम कुछ भी नहीं हुआ।

581 कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी ॥ 4.26.C3
582 इहाँ न सुधि सीता कै पाई। उहाँ गएँ मारिहि कपिराई ॥ 4.26.C4
अंगद ने नेत्रों में जल भरकर कहा, "दोनों प्रकार से अब हमारी मृत्यु आ गई। यहाँ तो सीता का कुछ पता नहीं लगा, लौटने पर वानरराज सुग्रीव हमें वहाँ मार डालेंगे।"

583 हम सीता कै सुधि लीन्हें बिना। नहिं जैहैं जुबराज प्रबीना ॥ 4.26.C9
584 जामवंत अंगद दुख देखी। कहीं कथा उपदेस बिसेषी ॥ 4.26.C11
अंगद को दुखी जानकर वानर उन्हें सांत्वना देने लगे, "हे प्रवीण युवराज! हम सीता को खोजे बिना वापस नहीं लौटेंगे।" जामवंत ने भी विशेष उपदेश की कथाएँ सुनाते हुए कहा,

585 निज इच्छाँ प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि। 4.26.D1
586 सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि ॥ 4.26.D2
"देवता, पृथ्वी, गौ और ब्राह्मणों के लिए प्रभु अपनी इच्छा से अवतार लेते हैं। सगुण के उपासक सब मोक्षों को त्यागकर उनकी सेवा में रहते हैं।"

587 एहि बिधि कथा कहहिं बहु भाँती। गिरि कंदराँ सुनी संपाती ॥ 4.27.C1
588 बाहेर होइ देखि बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा ॥ 4.27.C2
इस प्रकार जब वानरों में कथा-वार्ता हो रही थी, तब पर्वत की कंदरा में बैठे हुए गीध सम्पाती ने उनकी बातें सुनीं। बाहर आकर बहुत से वानर देखकर वह बोला, "आज जगदीश ने मुझे घर बैठे ही भोजन भेज दिया है।"

589 डरपे गीध बचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना ॥ 4.27.C5
गीध की बात सुनकर सब डर गए और सोचने लगे कि सच में आज हमारी मृत्यु आ गई।

590 कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम कोउ नाहीं ॥ 4.27.C7
591 राम काज कारन तनु त्यागी। हरि पुर गयउ परम बड़भागी ॥ 4.27.C8
अंगद तब मन में विचारकर बोले कि जटायु के समान धन्य कोई नहीं है, उन्होंने प्रभु राम के कार्य के लिए अपना शरीर त्याग दिया। अत्यंत भाग्यशाली वे प्रभु के धाम जा चुके हैं।

592 तिन्हहि अभय करि पूछेसि जाई। कथा सकल तिन्ह ताहि सुनाई॥ 4.27.C10
593 गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका। तहँ रह रावन सहज असंका ॥ 4.28.C11
सम्पाती ने वानरों को निर्भय करके सारी बातें पूछीं। तब उन्होंने सारी बातें सम्पाती को सुनाई। वह बोला, "समुद्र के उस पार त्रिकूट पर्वत पर लंका बसी हुई है। वहाँ स्वभाव ही से निडर राक्षस रावण रहता है।"

594 तहँ असोक उपबन जहँ रहई। सीता बैठि सोच रत अहई ॥ 4.28.C12
595 जो नाघइ सत जोजन सागर। करइ सो राम काज मति आगर॥ 4.29.C1
"वहाँ अशोक नाम की एक वाटिका है, जहाँ सीता सोच में मग्न बैठी हुई हैं। जो भी सौ योजन (आठ सौ मील) के इस समुद्र को लाँघ सकेगा, वही राम का काम कर सकेगा।"

596 जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा। नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा॥ 4.29.C7

रीछराज जामवंत बोले, "मैं अब बूढ़ा हो गया हूँ, शरीर में पहले जैसा बल भी नहीं रहा।"

597 बलि बाँधत प्रभु बाढ़ेउ सो तनु बरनि न जाइ। 4.29.D1
598 उभय घरी महँ दीन्हीं सात प्रदच्छिन धाइ॥ 4.29.D2

"दैत्यराज बलि को बाँधते समय प्रभु इतना अधिक बढ़े कि उनके विशाल आकार का वर्णन नहीं किया जा सकता। उस समय मैंने दौड़कर मात्र दो घड़ी में उनकी सात परिक्रमाएँ कर लीं।"

599 अंगद कहइ जाउँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा॥ 4.30.C1

अंगद ने कहा, "मैं उस पार जा तो सकता हूँ किन्तु वापस लौटने में मन में कुछ संदेह है।"

600 कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहेहु बलवाना॥ 4.30.C3
601 पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना॥ 4.30.C4

जामवंत ने तब हनुमान से कहा, "हे बलवान! तुम चुप क्यों बैठे हो? तुम पवनदेव के पुत्र हो और उन्हीं के समान तुम्हारा बल है। तुम बुद्धि, विवेक और विज्ञान की खान हो।"

602 राम काज लगि तव अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्बताकारा॥ 4.30.C6
603 सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी॥ 4.30.C9

"तुम्हारा जन्म राम के कार्य के लिए ही हुआ है।" यह सुनते ही हनुमान पर्वत के आकार के हो गए और बोले, "मैं रावण और उसकी सेना को मारकर तथा त्रिकूट पर्वत को उठाकर यहाँ ला सकता हूँ।"

604 जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु मोही॥ 4.30.C10
605 एतना करहु तात तुम्ह जाई। सीतहि देखि कहहु सुधि आई॥ 4.30.C11

"हे जामवंत! मैं आपसे पूछता हूँ, मुझे उचित सलाह दीजिए।" जामवंत बोले, "हे तात! अभी तुम मात्र इतना ही करो कि सीता को देखकर उनके समाचार ले आओ।"

606 भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहिं जे नर अरु नारि। 4.30a.D1
607 तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करहिं त्रिसिरारि॥ 4.30a.D2

श्री रघुनाथ का यश जन्म-मरण के रोग की अचूक औषधि है। जो पुरुष और स्त्री इसे सुनेंगे त्रिशिरा के शत्रु प्रभु राम उनके सब मनोरथों को अवश्य पूरा करेंगे।

सुन्दरकाण्ड

608 जामवंत के बचन सुहाए। सुनि हनुमंत हृदय अति भाए॥ 5.1.C1
609 तब लगि मोहि परिखेहु तुम्ह भाई। सहि दुख कंद मूल फल खाई॥ 5.1.C2
जामवंत के सुंदर वचन हनुमान के हृदय को बहुत अच्छे लगे। वे बोले, "हे भाई! आप सब कंद, मूल, फल खाकर दु:ख सहते हुए मेरी प्रतीक्षा करना।"

610 बार बार रघुबीर सँभारी। तरकेउ पवनतनय बल भारी॥ 5.1.C6
611 जेहिं गिरि चरन देइ हनुमंता। चलेउ सो गा पाताल तुरंता॥ 5.1.C7
फिर बार-बार रघुनाथ का स्मरण करते हुए अति बलवान हनुमान बड़ी फुर्ती से उछले। जिस पर्वत से वे उछले, वह तुरंत ही पाताल में चला गया।

612 जिमि अमोघ रघुपति कर बाना। एही भाँति चलेउ हनुमाना॥ 5.1.C8
613 जलनिधि रघुपति दूत बिचारी। तैं मैनाक होहि श्रमहारी॥ 5.1.C9
जिस प्रकार राम का अमोघ बाण चलता है, उसी प्रकार हनुमान भी तेजी से चल पड़े। समुद्र ने हनुमान को राम का दूत जानकर अपने भीतर स्थित मैनाक पर्वत से कहा, "तुम जाकर हनुमान की थकान दूर करो।"

614 हनूमान तेहि परसा कर पुनि कीन्ह प्रनाम। 5.1.D1
615 राम काजु कीन्हें बिनु मोहि कहाँ बिश्राम॥ 5.1.D2
हनुमान ने उसे स्पर्श करते हुए प्रणाम किया और कहा, "प्रभु राम का काम पूरा किए बिना मुझे भला विश्राम कहाँ?"

616 जात पवनसुत देवन्ह देखा। जानैं कहुँ बल बुद्धि बिसेषा॥ 5.2.C1
617 सुरसा नाम अहिन्ह कै माता। पठइन्हि आइ कही तेहिं बाता॥ 5.2.C2
जब देवताओं ने हनुमान को लंका जाते हुए देखा, उनके विशेष बल और बुद्धि की परीक्षा लेने के लिए साँपों की माता सुरसा को वहाँ भेजा। उसने आकर हनुमान से कहा,

618 आजु सुरन्ह मोहि दीन्ह अहारा। सुनत बचन कह पवनकुमारा॥ 5.2.C3
619 राम काजु करि फिरि मैं आवौं। सीता कइ सुधि प्रभुहि सुनावौं॥ 5.2.C4
"आज देवताओं ने तुम्हें मेरे भोजन के लिए भेजा है।" यह सुनकर हनुमान बोले, "मैं श्री राम का कार्य पूरा करके और उन्हें माता सीता के समाचार सुनाकर, आपके पास वापस लौट आऊँगा।"

620 तब तव बदन पैठिहउँ आई। सत्य कहउँ मोहि जान दे माई॥ 5.2.C5
621 कवनेहुँ जतन देइ नहिं जाना। ग्रससि न मोहि कहेउ हनुमाना॥ 5.2.C6
"तब मैं आकर आपके मुँह में घुस जाऊँगा। हे माता! मैं सच कह रहा हूँ, मुझे जाने दो।" जब किसी भी उपाय से उसने नहीं जाने दिया, हनुमान ने कहा, "तो फिर मुझे खा क्यों नहीं लेती?"

622 जोजन भरि तेहिं बदनु पसारा। कपि तनु कीन्ह दुगुन बिस्तारा॥ 5.2.C7
623 जस जस सुरसा बदनु बढ़ावा। तासु दून कपि रूप देखावा॥ 5.2.C9
तब सुरसा ने अपना मुँह एक योजन (आठ मील) चौड़ा फैला लिया। हनुमान ने उससे दुगुना अपना विस्तार किया। जैसे जैसे सुरसा मुख का विस्तार करती गई, वैसे वैसे वे भी दुगुना आकार लेते गए।

624 सत जोजन तेहिं आनन कीन्हा। अति लघु रूप पवनसुत लीन्हा॥ 5.2.C10
625 बदन पइठि पुनि बाहेर आवा। मागा बिदा ताहि सिरु नावा॥ 5.2.C11
फिर सुरसा ने अपना मुँह सौ योजन का किया। यह देखकर हनुमान ने अत्यंत छोटा रूप धारण किया। वे सुरसा के मुँह में जाकर शीघ्र बाहर आ गए और सिर झुकाकर विदा माँगी।

626 राम काजु सबु करिहहु तुम्ह बल बुद्धि निधान। 5.2.D1
627 आसिष देइ गई सो हरषि चलेउ हनुमान॥ 5.2.D2
सुरसा ने कहा, "तुम बल और बुद्धि के निधान हो, तुम ही रामचन्द्र का काम करोगे।" आशीर्वाद देकर सुरसा लौट गई और हनुमान हर्षित होकर आगे चल पड़े।

628 निसिचरि एक सिंधु महुँ रहई। करि माया नभु के खग गहई ॥ 5.3.C1
629 सोइ छल हनूमान कहँ कीन्हा। तासु कपटु कपि तुरतहिं चीन्हा॥ 5.3.C4
उस समुद्र में एक राक्षसी रहती थी, जो माया से आकाश में उड़ते हुए पक्षियों को उनकी छाया के सहारे पकड़ लेती थी। उसने वही छल हनुमान से किया। उसका कपट उन्होंने तुरंत भाँप लिया।

630 ताहि मारि मारुतसुत बीरा। बारिधि पार गयउ मतिधीरा ॥ 5.3.C5
तब धीरबुद्धि मारुति के पुत्र वीर हनुमान उसे मारकर समुद्र के पार पहुँच गए।

631 मसक समान रूप कपि धरी। लंकहि चलेउ सुमिरि नरहरी ॥ 5.4.C1
632 नाम लंकिनी एक निसिचरी। सो कह चलेसि मोहि निंदरी ॥ 5.4.C2
वहाँ हनुमान ने अपना आकार मच्छर जैसा छोटा बना लिया और प्रभु रामचन्द्र का स्मरण करते हुए वे लंका की ओर चल पड़े। वहाँ लंकिनी नाम की एक राक्षसी लंका की रक्षा कर रही थी। हनुमान को देखकर वह बोली, "मेरी उपेक्षा करके कहाँ जा रहा है?"

633 मुठिका एक महा कपि हनी। रुधिर बमत धरनीं ढनमनी ॥ 5.4.C4
634 पुनि संभारि उठी सो लंका। जोरि पानि कर बिनय ससंका ॥ 5.4.C5
तब हनुमान ने उसे एक घूँसा मारा, जिससे वह खून की उल्टी करती हुई धरती पर लुढ़क गई। तब लंकिनी अपने आपको सँभालते हुए उठी और डर के मारे हाथ जोड़कर विनती करने लगी।

635 जब रावनहि ब्रह्म बर दीन्हा। चलत बिरंचि कहा मोहि चीन्हा ॥ 5.4.C6
636 बिकल होसि तैं कपि के मारे। तब जानेसु निसिचर संघारे ॥ 5.4.C7
"जब ब्रह्मा ने रावण को वरदान दिया था, चलते-चलते मुझे यह संकेत दिया था कि जब किसी वानर की मार से तुम व्याकुल हो जाओ, तब समझ लेना कि राक्षसों का नाश होने वाला है।"

637 तात स्वर्ग अपबर्ग सुख धरिअ तुला एक अंग। 5.4.D1
638 तूल न ताहि सकल मिलि जो सुख लव सतसंग ॥ 5.4.D2

"हे तात! यदि स्वर्ग और मोक्ष के सुखों को तराजू के एक पलड़े में रखा जाए, वे मिलकर भी उस सुख के बराबर नहीं हो सकते, जो दूसरे पलड़े में रखे सत्संग के एक क्षण मात्र में मिलता है।"

639 प्रबिसि नगर कीजे सब काजा। हृदयँ राखि कोसलपुर राजा॥ 5.5.C1
640 अति लघु रूप धरेउ हनुमाना। पैठा नगर सुमिरि भगवाना॥ 5.5.C4
"आप कोसलराज रामचन्द्र को हृदय में रखकर लंका में प्रवेश करके सब काम कीजिए।" भगवान राम का स्मरण करते हुए हनुमान ने अत्यंत छोटे रूप में लंका में प्रवेश किया।

641 गयउ दसानन मंदिर माहीं। अति बिचित्र कहि जात सो नाहीं॥ 5.5.C6
642 सयन किएँ देखा कपि तेही। मंदिर महुँ न दीखि बैदेही॥ 5.5.C7
हनुमान रावण के महल में गए, जो बहुत सुंदर था, जिसका वर्णन नहीं हो सकता। उन्होंने वहाँ रावण को सोते हुए देखा, पर सीता महल में कहीं भी दिखाई नहीं दीं।

643 भवन एक पुनि दीख सुहावा। हरि मंदिर तहँ भिन्न बनावा॥ 5.5.C8
फिर उन्हें एक सुंदर महल दिखाई दिया, जहाँ भगवान का एक अनूठा मंदिर बना हुआ था।

644 रामायुध अंकित गृह सोभा बरनि न जाइ। 5.5.D1
645 नव तुलसिका बृंद तहँ देखि हरष कपिराइ॥ 5.5.D2
वहाँ राम के धनुष-बाण अंकित थे, उस महल की शोभा का वर्णन नहीं किया जा सकता। वहाँ तुलसी के नए पौधों को देखकर हनुमान बड़े प्रसन्न हुए।

646 मन महुँ तरक करैं कपि लागा। तेहीं समय बिभीषनु जागा॥ 5.6.C2
647 राम राम तेहिं सुमिरन कीन्हा। हृदयँ हरष कपि सज्जन चीन्हा॥ 5.6.C3
वे मन में विचार कर ही रहे थे कि उसी समय विभीषण जाग उठे। उठते ही उन्होंने राम नाम का स्मरण किया। उन्हें सज्जन जानकर हनुमान हृदय में हर्षित हुए।

648 तब हनुमंत कहा सुनु भ्राता। देखी चहउँ जानकी माता॥ 5.8.C4
649 जुगुति बिभीषन सकल सुनाई। चलेउ पवनसुत बिदा कराई॥ 5.8.C5
तब हनुमान ने कहा, "हे भाई, सुनो! मैं सीता माता को देखना चाहता हूँ।" विभीषण ने सीता के दर्शन करने के सारे उपाय बताए। हनुमान उनसे विदा लेकर चल पड़े।

650 करि सोइ रूप गयउ पुनि तहवाँ। बन असोक सीता रह जहवाँ॥ 5.8.C6
फिर से उन्होंने वही छोटा रूप ले लिया और जहाँ सीता रहती थीं, उस अशोकवन में पहुँच गए।

651 निज पद नयन दिएँ मन राम पद कमल लीन । 5.8.D1
652 परम दुखी भा पवनसुत देखि जानकी दीन॥ 5.8.D2
वहाँ उन्होंने सीता को चरणों की ओर टकटकी लगाए तथा मन को प्रभु राम के चरणकमलों में लीन किए हुए देखा। उनको इस अवस्था में देखकर हनुमान को बहुत दु:ख हुआ।

653 तरु पल्लव महुँ रहा लुकाई। करइ बिचार करौं का भाई॥ 5.9.C1
654 तेहि अवसर रावनु तहँ आवा। संग नारि बहु किएँ बनावा॥ 5.9.C2
वे वृक्ष के पत्तों में छिपकर सोचने लगे कि अब मैं क्या करूँ? उसी समय रावण बहुत-सी स्त्रियों के साथ सज-धजकर वहाँ आया।

655 बहु बिधि खल सीतहि समुझावा। साम दान भय भेद देखावा॥ 5.9.C3
656 कहेसि सकल निसिचरिन्ह बोलाई। सीतहि बहु बिधि त्रासहु जाई॥ 5.10.C8
उस दुष्ट ने सीता को बहुत प्रकार से समझाया और साम, दाम, भय और भेद दिखलाया। जाते-जाते राक्षसियों को बुलाकर उसने कहा, "सीता को तरह-तरह से डराओ-धमकाओ।"

657 देखि परम बिरहाकुल सीता। सो छन कपिहि कलप सम बीता॥ 5.12.C12
सीता के विरह की व्याकुलता का वह क्षण हनुमान को एक कल्प के समान लम्बा बीता।

658 कपि करि हृदयँ बिचार दीन्हि मुद्रिका डारि तब । 5.12.S1
659 जनु असोक अंगार दीन्ह हरषि उठि कर गहेउ ॥ 5.12.S2
तब हृदय में विचार करके हनुमान ने राम की अँगूठी उनके आगे डाल दी। सीता को लगा कि अशोक वृक्ष ने अंगारा दे दिया। यह सोचकर उन्होंने हर्षित होकर अँगूठी को उठा लिया।

660 तब देखी मुद्रिका मनोहर । राम नाम अंकित अति सुंदर ॥ 5.13.C1
तब सीता ने राम नाम से अंकित सुंदर और मनोहर अँगूठी देखी।

661 राम दूत मैं मातु जानकी । सत्य सपथ करुनानिधान की ॥ 5.13.C9
662 यह मुद्रिका मातु मैं आनी । दीन्हि राम तुम्ह कहँ सहिदानी ॥ 5.13.C10
हनुमान ने कहा, "हे माता जानकी! मैं करुणानिधान प्रभु राम की सच्ची शपथ लेकर कहता हूँ कि मैं उनका दूत हूँ। हे माता! इस अँगूठी को मैं ही लाया हूँ जिसे प्रभु राम ने निशानी के रूप में आपके लिए भेजा है।"

663 हरिजन जानि प्रीति अति गाढ़ी । सजल नयन पुलकावलि बाढ़ी ॥ 5.14.C1
664 अब कहु कुसल जाउँ बलिहारी। अनुज सहित सुख भवन खरारी ॥ 5.14.C3
हनुमान को प्रभु का सेवक जानकर सीता के मन में बड़ी गाढ़ी प्रीति हो गई, उनके नेत्र सजल हो गए तथा शरीर अत्यंत पुलकित हो गया। वे बोलीं, "मैं बलिहारी जाती हूँ। अब, भाई लक्ष्मण सहित, सुखों के धाम रघुनाथ की कुशलता के समाचार कहो।"

665 मातु कुसल प्रभु अनुज समेता । तव दुख दुखी सुकृपा निकेता ॥ 5.14.C9
666 जनि जननी मानहु जियँ ऊना । तुम्ह ते प्रेमु राम कें दूना ॥ 5.14.C10
हनुमान बोले, "हे माता! सुन्दर कृपा के धाम प्रभु अनुज लक्ष्मण के साथ सकुशल हैं। मात्र आप के दु:ख से दुखी हैं। आप अपने मन में दुखी न हों, प्रभु राम का प्रेम आपसे दुगुना है।"

667 रघुपति कर संदेसु अब सुनु जननी धरि धीर । 5.14.D1
668 अस कहि कपि गदगद भयउ भरे बिलोचन नीर ॥ 5.14.D2

"हे माता! आप धैर्य से रघुनाथ जी का सन्देश सुनिए।" ऐसा कहते-कहते हनुमान गदगद हो गए और उनके नेत्रों में जल भर आया।

669 कहेउ राम बियोग तव सीता। मो कहुँ सकल भए बिपरीता॥ 5.15.C1
670 तत्व प्रेम कर मम अरु तोरा। जानत प्रिया एकु मनु मोरा॥ 5.15.C6
हनुमान बोले, "प्रभु राम ने कहा है कि हे सीता! तुम्हारे वियोग में सब कुछ मेरे विपरीत हो गया है। मेरे और तुम्हारे प्रेम का तत्त्व एक मात्र मेरा मन ही जानता है।"

671 सो मनु सदा रहत तोहि पाहीं। जानु प्रीति रसु एतनेहि माहीं॥ 5.15.C7
672 प्रभु संदेसु सुनत बैदेही। मगन प्रेम तन सुधि नहिं तेही॥ 5.15.C8
"वह मन सदा तुम्हारे पास रहता है, मेरे प्रेम का सार इतने में ही समझ लो।" प्रभु का सन्देश सुनकर सीता प्रेम में मग्न हो गईं और उन्हें अपने तन की सुधि न रही।

673 कछुक दिवस जननी धरु धीरा। कपिन्ह सहित अइहहिं रघुबीरा॥ 5.16.C4
674 निसिचर मारि तोहि लै जैहहिं। तिहुँ पुर नारदादि जसु गैहहिं॥ 5.16.C5
हनुमान बोले, "हे माता! आप कुछ दिन और धीरज रखें। प्रभु राम वानरों सहित आएँगे और राक्षसों को मारकर आपको ले जाएँगे। नारद आदि ऋषि-मुनि तीनों लोकों में उनका यश गाएँगे।"

675 आसिष दीन्हि रामप्रिय जाना। होहु तात बल सील निधाना॥ 5.17.C2
676 अजर अमर गुननिधि सुत होहू। करहुँ बहुत रघुनायक छोहू॥ 5.17.C3
सीता ने हनुमान को राम का प्रिय जानकर आशीर्वाद दिया, "हे पुत्र! तुम बल और शील के निधान बनो। तुम अजर, अमर और गुणों के भण्डार बनो। रघुकुल के नायक प्रभु राम तुम पर बहुत कृपा करें।"

677 अब कृतकृत्य भयउँ मैं माता। आसिष तव अमोघ बिख्याता॥ 5.17.C6
678 सुनहु मातु मोहि अतिसय भूखा। लागि देखि सुंदर फल रूखा॥ 5.17.C7
हनुमान बोले, "हे माता! अब मैं कृतार्थ हो गया। आपका आशीर्वाद अचूक है, यह बात प्रसिद्ध है। हे माता सुनो, इन पेड़ों के सुंदर फल देखकर मुझे बड़ी जोर की भूख लगने लगी है।"

679 देखि बुद्धि बल निपुन कपि कहेउ जानकीं जाहु। 5.17.D1
680 रघुपति चरन हृदयँ धरि तात मधुर फल खाहु॥ 5.17.D2
हनुमान को बुद्धि और बल में श्रेष्ठ जानकर सीता ने कहा, "हे तात! जाओ, रघुनाथ जी के चरणों को हृदय में रखकर मीठे फल खाओ।"

681 चलेउ नाइ सिरु पैठेउ बागा। फल खाएसि तरु तोरैं लागा॥ 5.18.C1
हनुमान ने सीता को सिर नवाकर बाग में प्रवेश किया। पहले कुछ फल खाए, फिर वे वृक्षों को तोड़ने लगे।

682 सुनि रावन पठए भट नाना। तिन्हहि देखि गर्जेउ हनुमाना॥ 5.18.C5
683 सब रजनीचर कपि संघारे। गए पुकारत कछु अधमारे॥ 5.18.C6
यह सुनकर रावण ने अनेक योद्धा भेजे, जिन्हें देखते ही हनुमान गर्जना करने लगे। सारे राक्षसों को हनुमान ने मार गिराया। जो कुछ अधमरे रह गए, वे चीखते-चिल्लाते रावण के दरबार में पहुँचे।

684 पुनि पठयउ तेहिं अच्छकुमारा। चला संग लै सुभट अपारा॥ 5.18.C7
685 आवत देखि बिटप गहि तर्जा। ताहि निपाति महाधुनि गर्जा॥ 5.18.C8
फिर रावण ने अपने बेटे अक्षयकुमार को भेजा, जो अनगिनत वीर योद्धाओं को अपने साथ लेकर चला। उसे आते देखकर हनुमान ने एक वृक्ष हाथ में लेकर ललकारा और उसे मारकर बड़ी जोर से गर्जना करने लगे।

686 चला इंद्रजित अतुलित जोधा। बंधु निधन सुनि उपजा क्रोधा॥ 5.19.C3
687 उठि बहोरि कीन्हिसि बहु माया। जीति न जाइ प्रभंजन जाया॥ 5.19.C9
भाई की मृत्यु सुनकर अतुलित योद्धा मेघनाद को बड़ा क्रोध आया और वह युद्ध करने के लिए चल पड़ा। उसने उठकर अनेक प्रकार से माया की, पर वह पवन के पुत्र हनुमान को जीत नहीं सका।

688 ब्रह्म अस्त्र तेहि साँधा कपि मन कीन्ह बिचार। 5.19.D1
689 जौं न ब्रह्मसर मानउँ महिमा मिटइ अपार॥ 5.19.D2

तब मेघनाद ने ब्रह्मास्त्र का सन्धान किया। हनुमान ने सोचा कि यदि मैं ब्रह्मास्त्र को नहीं मानता हूँ तो इसकी अपार महिमा मिट जाएगी, इसलिए वे अस्त्र लगने पर अपनी इच्छा से मूर्छित हो गए।

690 तेहिं देखा कपि मुरुछित भयउ। नागपास बाँधेसि लै गयउ॥ 5.20.C2
691 कह लंकेस कवन तैं कीसा। केहि कें बल घालेहि बन खीसा॥ 5.21.C1
हनुमान को मूर्छित देखकर मेघनाद उन्हें नागपाश में बाँधकर रावण के दरबार में ले गया। रावण हनुमान से बोला, "हे वानर! तू कौन है? किसके बल पर तूने वन को उजाड़कर नष्ट कर दिया?"

692 सुनु रावन ब्रह्मांड निकाया। पाइ जासु बल बिरचति माया॥ 5.21.C4
693 जाकें बल बिरंचि हरि ईसा। पालत सृजत हरत दससीसा॥ 5.21.C5
694 खर दूषन त्रिसिरा अरु बाली। बधे सकल अतुलित बलसाली॥ 5.21.C9
हनुमान बोले, "हे रावण! जिनसे बल पाकर माया सारे ब्रह्माण्डों की रचना करती है; ब्रह्मा, विष्णु और महेश (क्रमशः) संसार की रचना, पालन और संहार करते हैं; जिन्होंने खर, दूषण, त्रिशिरा और बालि जैसे अतुलित बलवानों को मार दिया।"

695 जाके बल लवलेस तें जितेहु चराचर झारि। 5.21.D1
696 तासु दूत मैं जा करि हरि आनेहु प्रिय नारि॥ 5.21.D2
"जिनके लेश मात्र बल से तुमने चराचर विश्व को जीत लिया है; जिनकी प्रिय पत्नी को तुम हर लाए हो, मैं उन्हीं प्रभु राम का दूत हूँ।"

697 बिनती करउँ जोरि कर रावन। सुनहु मान तजि मोर सिखावन॥ 5.22.C7
698 राम चरन पंकज उर धरहू। लंका अचल राजु तुम्ह करहू॥ 5.23.C1
"हे रावण! मैं हाथ जोड़कर तुमसे प्रार्थना करता हूँ, अपना अभिमान छोड़कर मेरी सीख सुनो। प्रभु राम के चरणकमलों को हृदय में रखकर तुम लंका पर अचल राज्य करो।"

699 सुनि कपि बचन बहुत खिसिआना। बेगि न हरहु मूढ़ कर प्राना॥ 5.24.C5
700 सुनत निसाचर मारन धाए। सचिवन्ह सहित बिभीषनु आए॥ 5.24.C6

हनुमान की बात सुनकर रावण बहुत खिसियाया और राक्षसों से बोला, "इस मूढ़ के प्राण शीघ्र क्यों नहीं ले लेते?" यह सुनते ही राक्षस हनुमान को मारने दौड़े। उसी समय दरबार में अपने मंत्रियों के साथ विभीषण आए।

701 नाइ सीस करि बिनय बहूता। नीति बिरोध न मारिअ दूता॥ 5.24.C7
702 सुनत बिहसि बोला दसकंधर। अंग भंग करि पठइअ बंदर॥ 5.24.C9
अत्यंत विनय से सिर झुकाकर विभीषण बोले कि दूत को मारना नीति के विरुद्ध है। सुनकर रावण हँसकर बोला, "तो ठीक है, इस बंदर को अंग-भंग करके वापस भेज दिया जाए।"

703 कपि कें ममता पूँछ पर सबहि कहउँ समुझाइ। 5.24.D1
704 तेल बोरि पट बाँधि पुनि पावक देहु लगाइ॥ 5.24.D2
"मैं सबको समझाकर कहता हूँ कि बंदर को अपनी पूँछ से विशेष प्रेम होता है, इसलिए तेल में कपड़ा डुबोकर इसकी पूँछ में बाँधकर, उसमें आग लगा दो।"

705 पावक जरत देखि हनुमंता। भयउ परम लघुरूप तुरंता॥ 5.25.C8
706 जरइ नगर भा लोग बिहाला। झपट लपट बहु कोटि कराला॥ 5.26.C2
हनुमान ने जब पूँछ में आग लगी देखी, तुरंत छोटे आकार में आकर वे आग फैलाने लगे। सारा नगर जलने लगा, लोग व्याकुल हो गए। आग की करोड़ों भयंकर लपटें फैलने लगीं।

707 जारा नगरु निमिष एक माहीं। एक बिभीषन कर गृह नाहीं॥ 5.26.C6
708 उलटि पलटि लंका सब जारी। कूदि परा पुनि सिंधु मझारी॥ 5.26.C8
हनुमान ने एक विभीषण के घर को छोड़कर सारा नगर क्षण मात्र में जला डाला। उलट-पलटकर सारी लंका जला डालने के बाद वे समुद्र में कूद पड़े।

709 पूँछ बुझाइ खोइ श्रम धरि लघु रूप बहोरि। 5.26.D1
710 जनकसुता कें आगें ठाढ़ भयउ कर जोरि॥ 5.26.D2
समुद्र में अपनी पूँछ की आग बुझाकर उन्होंने अपनी थकावट दूर की। फिर छोटा आकार लेकर वे सीता के आगे हाथ जोड़कर जा खड़े हुए।

711 मातु मोहि दीजे कछु चीन्हा। जैसें रघुनायक मोहि दीन्हा॥ 5.27.C1
712 चूड़ामनि उतारि तब दयऊ। हरष समेत पवनसुत लयऊ॥ 5.27.C2
वे बोले, "हे माता! आप मुझे अपनी कुछ पहचान दीजिए जैसे रघुकुल के नायक रामचन्द्र ने मुझे आपके लिए दी थी।" सीता ने तब चूड़ामणि उतारकर दे दी जिसे हनुमान ने बड़ी प्रसन्नता से लिया।

713 कहेहु तात अस मोर प्रनामा। सब प्रकार प्रभु पूरनकामा॥ 5.27.C3
714 दीन दयाल बिरिदु संभारी। हरहु नाथ मम संकट भारी॥ 5.27.C4
सीता ने कहा, "हे तात! प्रभु को मेरे प्रणाम के साथ कहना- हे प्रभु! यद्यपि आप सब प्रकार से पूर्णकाम हैं, तथापि दुखियों पर दया करना आपका यश है। अतः उस यश को याद करके मेरे भारी संकट को दूर कीजिए।"

715 जनकसुतहि समुझाइ करि बहु बिधि धीरजु दीन्ह। 5.27.D1
716 चरन कमल सिरु नाइ कपि गवनु राम पहिं कीन्ह॥ 5.27.D2
हनुमान ने सीता को बहुत प्रकार से समझाकर धीरज दिया और उनके चरणकमलों में सिर झुकाकर वे राम के पास चल दिए।

717 पवनतनय के चरित सुहाए। जामवंत रघुपतिहि सुनाए॥ 5.30.C6
718 सुनत कृपानिधि मन अति भाए। पुनि हनुमान हरषि हियँ लाए॥ 5.30.C7
जामवंत ने हनुमान के सारे सुंदर कार्य राम को सुनाए, जो कृपा के सागर राम को बड़े अच्छे लगे। हर्षित होकर उन्होंने हनुमान को हृदय से लगा लिया।

719 चलत मोहि चूड़ामनि दीन्ही। रघुपति हृदयँ लाइ सोइ लीन्ही॥ 5.31.C1
720 सीता कै अति बिपति बिसाला। बिनहिं कहें भलि दीनदयाला॥ 5.31.C9
हनुमान ने कहा, "चलते समय माता सीता ने मुझे अपनी चूड़ामणि दी है।" राम ने उसे अपने हृदय से लगा लिया। हनुमान ने आगे कहा, "हे दीनदयाल! उनकी विपत्ति बहुत बड़ी है। इस विषय में कुछ नहीं कहना ही उचित रहेगा।"

721 तब रघुपति कपिपतिहि बोलावा। कहा चलैं कर करहु बनावा॥ 5.34.C6
722 चला कटकु को बरनैं पारा। गर्जहिं बानर भालु अपारा॥ 5.35.C8

रघुपति ने तब वानरों के राजा सुग्रीव को बुलाकर कहा, "चलने की तैयारी करो।" आज्ञा मिलते ही उनकी विशाल सेना चल पड़ी, उसका वर्णन कौन कर सकता है? असंख्य वानर और भालू गर्जना करने लगे।

723 एहि बिधि जाइ कृपानिधि उतरे सागर तीर। 5.35.D1
724 जहँ तहँ लागे खान फल भालु बिपुल कपि बीर॥ 5.35.D2

इस प्रकार कृपानिधान राम सागर के किनारे पहुँच गए। वीर वानर और भालू जहाँ-तहाँ फल खाने लगे।

725 उहाँ निसाचर रहहिं ससंका। जब तें जारि गयउ कपि लंका॥ 5.36.C1
726 अवसर जानि बिभीषनु आवा। भ्राता चरन सीसु तेहिं नावा॥ 5.38.C2

जब से हनुमान लंका को जला गए, तब से वहाँ राक्षस भय से रहने लगे। उचित समय जानकर विभीषण रावण के दरबार में आए और अपने भाई के चरणों में सिर नवाया।

727 तात राम नहिं नर भूपाला। भुवनेस्वर कालहु कर काला॥ 5.39.C1
728 देहु नाथ प्रभु कहुँ बैदेही। भजहु राम बिनु हेतु सनेही॥ 5.39.C6

वे बोले, "हे तात! श्री रामचन्द्र केवल मनुष्यों के ही नहीं, सारे लोकों के स्वामी और काल के भी काल हैं। अतः आप प्रभु को सीता जी लौटा दीजिए और बिना किसी स्वार्थ के स्नेह करनेवाले राम को भजिए।"

729 सुनत दसानन उठा रिसाई। खल तोहि निकट मृत्यु अब आई॥ 5.41.C2
730 अस कहि कीन्हेसि चरन प्रहारा। अनुज गहे पद बारहिं बारा॥ 5.41.C6

यह सुनते ही रावण क्रोधित होकर बोला, "अरे दुष्ट! तेरी मृत्यु अब निकट आ गई है।" यह कहकर उसने विभीषण को लात मारी। फिर भी छोटे भाई विभीषण ने रावण के पैर बार-बार पकड़े।

731 रामु सत्यसंकल्प प्रभु सभा कालबस तोरि। 5.41.D1
732 मैं रघुबीर सरन अब जाउँ देहु जनि खोरि॥ 5.41.D2

तब विभीषण बोले, "श्री रामचन्द्र सत्यसंकल्प एवं परमेश्वर हैं और तुम्हारी सभा काल के वश है। इसलिए मैं अब रघुवीर की शरण में जाता हूँ, मुझे कोई दोष मत देना।"

733 श्रवन सुजसु सुनि आयउँ प्रभु भंजन भव भीर। 5.45.D1
734 त्राहि त्राहि आरति हरन सरन सुखद रघुबीर॥ 5.45.D2

रामचन्द्र के पास पहुँचकर विभीषण बोले, "हे प्रभु! मैं आपका सुंदर यश सुनकर यहाँ आया हूँ। आप जन्म और मरण के भय का नाश करनेवाले हैं। हे दुखियों के दु:ख दूर करनेवाले, शरण में आए को सुख देनेवाले, श्री रघुवीर! रक्षा कीजिए! रक्षा कीजिए!"

735 सुनहु सखा निज कहउँ सुभाऊ। जान भुसुंडि संभु गिरिजाऊ॥ 5.48.C1

राम बोले, "हे मित्र! मैं अपना स्वभाव बताता हूँ, जिसे काकभुशुण्डि, शिव और पार्वती भी जानते हैं।"

736 जौं नर होइ चराचर द्रोही। आवै सभय सरन तकि मोही॥ 5.48.C2
737 तजि मद मोह कपट छल नाना। करउँ सद्य तेहि साधु समाना॥ 5.48.C3

"यदि सारे विश्व के जड़-चेतन का द्रोही भी भयभीत होकर मेरी शरण में आता है, अपना मद, मोह, कपट और छल त्याग देता है, मैं उसे अत्यंत शीघ्र साधु के समान बना देता हूँ।"

738 अस कहि राम तिलक तेहि सारा। सुमन बृष्टि नभ भई अपारा॥ 5.49.C10
739 सुनु कपीस लंकापति बीरा। केहि बिधि तरिअ जलधि गंभीरा॥ 5.50.C5

ऐसा कहकर राम ने उनका राजतिलक किया। आकाश से फूलों की अपार वर्षा होने लगी। तब राम बोले, "हे वीर वानरराज सुग्रीव और लंकापति विभीषण! इस गहरे समुद्र को कैसे पार करें?"

740 कह लंकेस सुनहु रघुनायक। कोटि सिंधु सोषक तव सायक॥ 5.50.C7
741 जद्यपि तदपि नीति असि गाई। बिनय करिअ सागर सन जाई॥ 5.50.C8

विभीषण बोले, "हे रघुनायक! यद्यपि आपका एक बाण करोड़ों समुद्रों को सोख सकता है, नीति के अनुसार आपको सागर के पास जाकर उससे पहले विनती करनी चाहिए।"

742 प्रथम प्रनाम कीन्ह सिरु नाई। बैठे पुनि तट दर्भ डसाई॥ 5.51.C7
उनकी सलाह मानकर, राम ने सागर को सिर झुकाकर प्रणाम किया, फिर उसके किनारे कुश बिछाकर बैठ गए।

743 बिनय न मानत जलधि जड़ गए तीनि दिन बीति। 5.57.D1
744 बोले राम सकोप तब भय बिनु होइ न प्रीति॥ 5.57.D2
तीन दिन बीतने पर भी जब जड़ समुद्र ने राम की प्रार्थना नहीं सुनी, प्रभु क्रोधित होकर बोले, "बिना भय के प्रेम नहीं होता।"

745 अस कहि रघुपति चाप चढ़ावा। यह मत लछिमन के मन भावा॥ 5.58.C5
746 संधानेउ प्रभु बिसिख कराला। उठी उदधि उर अंतर ज्वाला॥ 5.58.C6
यह कहकर उन्होंने धनुष चढ़ाया, जो लक्ष्मण के मन को बड़ा अच्छा लगा। प्रभु का भयंकर बाण धनुष पर चढ़ते ही समुद्र के हृदय के अंदर आग की ज्वाला प्रकट हो गई।

747 कनक थार भरि मनि गन नाना। बिप्र रूप आयउ तजि माना॥ 5.58.C8
748 सभय सिंधु गहि पद प्रभु केरे। छमहु नाथ सब अवगुन मेरे॥ 5.59.C1
समुद्र तब अपना अभिमान छोड़कर, सोने के थाल में अनेक मणियों को लेकर, ब्राह्मण के रूप में वहाँ आया। डरते-डरते प्रभु राम के चरण पकड़कर बोला, "हे नाथ! मेरे सारे अवगुणों को क्षमा करें।"

749 नाथ नील नल कपि द्वौ भाई। लरिकाईं रिषि आसिष पाई॥ 5.60.C1
750 तिन्ह कें परस किएँ गिरि भारे। तरिहहिं जलधि प्रताप तुम्हारे॥ 5.60.C2
"हे नाथ! आप की सेना में नल और नील दो वानर भाई हैं, जिन्हें बचपन में ऋषियों से एक आशीर्वाद मिला था। इनके छूने और आप के प्रताप से भारी-भारी पहाड़ भी समुद्र में तैर जाएँगे।"

751 मैं पुनि उर धरि प्रभु प्रभुताई। करिहउँ बल अनुमान सहाई॥ 5.60.C3
752 एहि बिधि नाथ पयोधि बँधाइअ। जेहिं यह सुजसु लोक तिहुँ गाइअ॥ 5.60.C4
"मैं भी आपकी प्रभुता को हृदय में रखकर, अपने बल के अनुसार सहायता करूँगा। हे नाथ! आप इस प्रकार समुद्र को बाँधें, जिससे तीनों लोकों में आपका सुयश गाया जाए।"

753 सकल सुमंगल दायक रघुनायक गुन गान। 5.60.D1
754 सादर सुनहिं ते तरहिं भव सिंधु बिना जलजान॥ 5.60.D2
श्री रघुनाथ का गुणगान सारे सुखों को देने वाला है। जो इसे आदरपूर्वक सुनेंगे, वे बिना किसी जहाज के ही भवसागर को तर जाएँगे।

लंकाकाण्ड

755 सिंधु बचन सुनि राम सचिव बोलि प्रभु अस कहेउ । 6.0b.S1
756 अब बिलंबु केहि काम करहु सेतु उतरै कटकु ॥ 6.0b.S2
सागर के वचन सुनकर राम ने मंत्रियों को बुलाकर कहा, "अब देरी किस बात की? पुल बनवाओ ताकि सेना उस पार जा सके।"

757 अति उतंग गिरि पादप लीलहिं लेहिं उठाइ । 6.1.D1
758 आनि देहिं नल नीलहि रचहिं ते सेतु बनाइ ॥ 6.1.D2
वानर-भालू ऊँचे-ऊँचे पर्वतों और वृक्षों को खेल-खेल में उखाड़कर उन्हें नल और नील को देते हैं, जिनसे उन्होंने अच्छी तरह रचकर सुंदर पुल बनाया।

759 देखि सेतु अति सुंदर रचना । बिहसि कृपानिधि बोले बचना ॥ 6.2.C2
760 करिहउँ इहाँ संभु थापना । मोरे हृदयँ परम कलपना ॥ 6.2.C4
पुल की सुंदर रचना देखकर कृपानिधि राम ने हँसकर कहा, "मैं यहाँ शिव जी की स्थापना करूँगा, मेरे हृदय में यह बड़ा संकल्प है।"

761 लिंग थापि बिधिवत करि पूजा । सिव समान प्रिय मोहि न दूजा ॥ 6.2.C6
762 जे रामेस्वर दरसनु करिहहिं । ते तनु तजि मम लोक सिधरिहहिं ॥ 6.3.C1
प्रभु ने शिवलिंग स्थापित करके उसका यथाविधि पूजन किया और कहा, "मुझे शिव जी के समान दूसरा कोई प्रिय नहीं है। जो कोई रामेश्वर के दर्शन करेंगे, वे देह त्यागकर मेरे लोक को जाएँगे।"

763 सेन सहित उतरे रघुबीरा । कहि न जाइ कपि जूथप भीरा ॥ 6.5.C2
764 सुनत श्रवन बारिधि बंधाना । दस मुख बोलि उठा अकुलाना ॥ 6.5.C10
सेना के साथ पुल पर चलकर राम समुद्र के पार पहुँच गए। वानरों तथा उनके सेनापतियों की इतनी भीड़ थी कि कहा नहीं जा सकता। उधर समुद्र पर पुल बाँधे जाने का समाचार सुनकर रावण घबड़ाकर दसों मुखों से एक साथ बोल उठा।

765 बाँध्यो बननिधि नीरनिधि जलधि सिंधु बारीस। 6.5.D1
766 सत्य तोयनिधि कंपति उदधि पयोधि नदीस॥ 6.5.D2
"क्या सच में ही वननिधि, नीरनिधि, जलधि, सिन्धु, वारीश, तोयनिधि, कंपति, उदधि, पयोधि, नदीश को बाँध लिया गया है?"

767 मंदोदरीं सुन्यो प्रभु आयो। कौतुकहीं पाथोधि बँधायो॥ 6.6.C2
768 तासु बिरोध न कीजिअ नाथा। काल करम जिव जाकें हाथा॥ 6.6.C9
मंदोदरी ने जब सुना कि प्रभु रामचन्द्र आ गए हैं और उन्होंने खेल-खेल में ही समुद्र को बाँध लिया है, वह रावण से बोली, "हे नाथ! उनका विरोध मत कीजिए, जिनके हाथ में काल, कर्म और जीव तीनों हैं।"

769 तासु भजनु कीजिअ तहँ भर्ता। जो कर्ता पालक संहर्ता॥ 6.7.C4
770 सुनु तैं प्रिया बृथा भय माना। जग जोधा को मोहि समाना॥ 6.8.C2
"हे स्वामी! आप उनका भजन कीजिए, जो संसार के उत्पन्न करनेवाले, पालक और संहारक हैं।" रावण बोला, "हे प्रिये! सुनो, तुम बेकार में ही डर रही हो। बताओ, मुझ जैसा योद्धा इस संसार में कौन है?"

771 इहाँ प्रात जागे रघुराई। पूछा मत सब सचिव बोलाई॥ 6.17.C1
772 मंत्र कहउँ निज मति अनुसारा। दूत पठाइअ बालिकुमारा॥ 6.17.C4
इधर जब प्रातःकाल रघुनाथ जागे, मंत्रियों को बुलाकर वे उनसे सलाह करने लगे। जामवंत बोले, "मैं अपनी सोच के अनुसार कहता हूँ कि बालि के पुत्र अंगद को दूत बनाकर रावण के पास भेजा जाए।"

773 बालितनय बुधि बल गुन धामा। लंका जाहु तात मम कामा॥ 6.17.C6
774 बंदि चरन उर धरि प्रभुताई। अंगद चलेउ सबहि सिरु नाई॥ 6.18.C1
राम ने अंगद से कहा, "हे बल, बुद्धि और गुणों के धाम बालिपुत्र! हे तात! तुम मेरे काम के लिए लंका जाओ।" अंगद ने उनके चरणों की वंदना की और हृदय में प्रभुता को धारण करके सबको सिर नवाकर चल पड़े।

775 गयउ सभा दरबार तब सुमिरि राम पद कंज। 6.18.D1
776 सिंह ठवनि इत उत चितव धीर बीर बल पुंज॥ 6.18.D2
प्रभु राम के चरणकमलों का स्मरण करके अंगद रावण की सभा में पहुँचे। वहाँ जाकर धीर, वीर और बल की राशि अंगद, सिंह जैसी शान से इधर-उधर देखने लगे।

777 कह दसकंठ कवन तैं बंदर। मैं रघुबीर दूत दसकंधर॥ 6.20.C1
778 अब सुभ कहा सुनहु तुम्ह मोरा। सब अपराध छमिहि प्रभु तोरा॥ 6.20.C6
दशकंठ रावण ने पूछा, "अरे बंदर! तू कौन है?" अंगद ने कहा, "हे दसकंध! मैं रघुवीर श्री रामचन्द्र का दूत हूँ। अब तुम अपने भले की बात सुनो। यदि उस पर अमल करोगे तो प्रभु तुम्हारे सब अपराध क्षमा कर देंगे।"

779 दसन गहहु तृन कंठ कुठारी। परिजन सहित संग निज नारी॥ 6.20.C7
780 सादर जनकसुता करि आगें। एहि बिधि चलहु सकल भय त्यागें॥ 6.20.C8
"दाँतो में तिनका दबाकर, गले में कुल्हाड़ी डालकर, सारे परिवार और अपनी स्त्रियों को साथ लेकर, सीता जी को आदरपूर्वक आगे करके और सारे भय छोड़कर मेरे साथ चलो।"

781 रे कपिपोत बोलु संभारी। मूढ़ न जानेहि मोहि सुरारी॥ 6.21.C1
यह सुनकर रावण बोला, "अरे बंदर के बच्चे! सँभालकर बोल। रे मूर्ख! क्या तू नहीं जानता कि मैं देवताओं का घोर शत्रु हूँ?"

782 पुनि सकोप बोलेउ जुबराजा। गाल बजावत तोहि न लाजा॥ 6.33.C3
783 रे त्रिय चोर कुमारग गामी। खल मल रासि मंदमति कामी॥ 6.33.C5
अंगद ने क्रोध से कहा, "तुझे गाल बजाते हुए शर्म नहीं आती? अरे, स्त्री-चोर और गलत मार्ग पर चलनेवाले, दुष्ट, पाप की राशि, मन्दबुद्धि और कामी!"

784 सो नर क्यों दसकंध बालि बध्यो जेहिं एक सर। 6.33a.S1
785 बीसहुँ लोचन अंध धिग तव जन्म कुजाति जड़॥ 6.33a.S2

"अरे दशकंध! जिसने बालि को एक ही बाण से मार डाला, क्या वह सामान्य मनुष्य हो सकता है? अरे कुजाति, अरे जड़! बीस नेत्रों के होते हुए भी तुम अंधे हो, तुम्हारे जन्म को धिक्कार है।"

786 समुझि राम प्रताप कपि कोपा। सभा माझ पन करि पद रोपा॥ 6.34.C8
787 जौं मम चरन सकसि सठ टारी। फिरहिं रामु सीता मैं हारी॥ 6.34.C9
फिर प्रभु राम के प्रताप को स्मरण करके, अंगद ने क्रोधित होकर रावण की सभा में दृढ़ता से पैर जमाकर कहा, "अरे मूर्ख! यदि तू मेरा पैर हटा सके तो राम लौट जाएँगे, मैं सीता को हार गया।"

788 झपटहिं करि बल बिपुल उपाई। पद न टरइ बैठहिं सिरु नाई॥ 6.34.C12
789 कपि बल देखि सकल हियँ हारे। उठा आपु कपि कें परचारे॥ 6.35.C1
राक्षस पूरे बल से अनेक उपाय लगाकर अंगद का पैर उठाने के लिए झपटते हैं, किन्तु उनसे पैर हिलता तक नहीं। तब सिर नीचा करके वे अपने-अपने स्थान पर लौट गए। अंगद का बल देखकर सब राक्षस हृदय से हार गए। तब अंगद की ललकार पर रावण स्वयं उठ खड़ा हुआ।

790 गहत चरन कह बालिकुमारा। मम पद गहें न तोर उबारा॥ 6.35.C2
791 गहसि न राम चरन सठ जाई। सुनत फिरा मन अति सकुचाई॥ 6.35.C3
जैसे ही पैर पकड़ने के लिए उसने हाथ बढ़ाया, अंगद बोले, "हे रावण! मेरे चरण पकड़ने से तेरा उद्धार नहीं होगा। अरे मूर्ख! तू जाकर प्रभु राम के चरणों को क्यों नहीं पकड़ता?" सुनकर रावण मन ही मन बहुत ही शर्मिंदा होकर लौट गया।

792 रिपु बल धरषि हरषि कपि बालितनय बल पुंज। 6.35a.D1
793 पुलक सरीर नयन जल गहे राम पद कंज॥ 6.35a.D2
इस प्रकार शत्रु के बल का मर्दन करके, बल की राशि अंगद ने प्रसन्न होकर राम के पास पहुँचकर उनके चरण पकड़ लिए। उनका शरीर पुलकित है, नेत्रों से आनन्द के आँसू बह रहे हैं।

794 रिपु के समाचार जब पाए। राम सचिव सब निकट बोलाए॥ 6.39.C1
795 लंका बाँके चारि दुआरा। केहि बिधि लागिअ करहु बिचारा॥ 6.39.C2
अंगद से शत्रु के समाचार मिलते ही राम ने मंत्रियों को सलाह के लिए बुलाया और कहा, "लंका के चार बड़े विकट दरवाजे हैं। उन पर किस तरह से आक्रमण किया जाये, इस बात पर विचार करो।"

796 करि बिचार तिन्ह मंत्र दृढ़ावा। चारि अनी कपि कटकु बनावा॥ 6.39.C4
797 हरषित राम चरन सिर नावहिं। गहि गिरि सिखर बीर सब धावहिं॥ 6.39.C7
विचार-विमर्श के बाद दृढ़ निश्चय करके सेना के चार दल बनाए गए। सब वीर हर्षित होकर प्रभु राम के चरणों में सिर झुकाते हैं और पर्वतों के शिखर लेकर दौड़ते हैं।

798 राम प्रताप प्रबल कपिजूथा। मर्दहिं निसिचर सुभट बरूथा॥ 6.42.C1
799 निज दल बिचल सुनी तेहिं काना। फेरि सुभट लंकेस रिसाना॥ 6.42.C6
प्रभु राम के प्रताप से बलशाली हुए वानरों के झुण्ड राक्षसों को मसलने लगे। रावण ने जब सुना कि उसकी सेना विचलित हो रही है, उसने रण से भागते हुए योद्धाओं को क्रोधित होकर लौटा दिया।

800 निसिचर अनी देखि कपि फिरे। जहँ तहँ कटकटाइ भट भिरे॥ 6.46.C5
801 कोपि कपिन्ह दुर्घट गढ़ु घेरा। नगर कोलाहलु भयउ घनेरा॥ 6.49.C9
राक्षसों की सेना आती देख वानर लौट पड़े और वे वीर कटकटाकर जहाँ-तहाँ भिड़ गए। उन्होंने क्रोधित होकर दुर्गम किले को घेर लिया, जिससे नगर में बहुत ही शोर मच गया।

802 मेघनाद सुनि श्रवन अस गढ़ु पुनि छेंका आइ। 6.49.D1
803 उतर्यो बीर दुर्ग तें सन्मुख चल्यो बजाइ॥ 6.49.D2
प्रात:काल मेघनाद ने जब सुना कि किले को घेर लिया गया है तो वह वीर किले से उतरा और डंका बजाते हुए सामने आ गया।

804 दस दस सर सब मारेसि परे भूमि कपि बीर। 6.50.D1
805 सिंहनाद करि गर्जा मेघनाद बल धीर॥ 6.50.D2

उसने सबको दस-दस बाण मारे, जिससे वीर वानर पृथ्वी पर गिर पड़े। बलवान और धीर मेघनाद तब सिंह के समान दहाड़ता हुआ गरजने लगा।

806 आयसु मागि राम पहिं अंगदादि कपि साथ। 6.52.D1
807 लछिमन चले क्रुद्ध होइ बान सरासन हाथ॥ 6.52.D2

तब लक्ष्मण ने प्रभु राम की आज्ञा ली और क्रोधित होकर, अंगद आदि वानरों के साथ, हाथ में धनुष-बाण लेकर मेघनाद से युद्ध करने चल पड़े।

808 लछिमन मेघनाद द्वौ जोधा। भिरहिं परसपर करि अति क्रोधा॥ 6.54.C2
809 बीरघातिनी छाड़िसि साँगी। तेजपुंज लछिमन उर लागी॥ 6.54.C7

लक्ष्मण और मेघनाद दोनों योद्धा अत्यंत क्रोध करके परस्पर युद्ध करने लगे। अपने प्राण संकट में जानकर मेघनाद ने वीरों का नाश करनेवाली 'वीरघातिनी' शक्ति चलाई। तेज से पूर्ण वह शक्ति लक्ष्मण के सीने में जा लगी, जिससे वे मूर्छित हो गए।

810 ब्यापक ब्रह्म अजित भुवनेस्वर। लछिमन कहाँ बूझ करुनाकर॥ 6.55.C5
811 तब लगि लै आयउ हनुमाना। अनुज देखि प्रभु अति दुख माना॥ 6.55.C6

उधर सर्वव्यापक, ब्रह्म, अजेय, सब लोकों के स्वामी और करुणा की खान रामचन्द्र पूछने लगे, "लक्ष्मण कहाँ है?" तब तक हनुमान उन्हें लेकर आ गए। छोटे भाई को मूर्छित देखकर प्रभु बड़े दुखी हो गए।

812 जामवंत कह बैद सुषेना। लंकाँ रहइ को पठई लेना॥ 6.55.C7
813 धरि लघु रूप गयउ हनुमंता। आनेउ भवन समेत तुरंता॥ 6.55.C8

जामवंत ने कहा, "लंका में सुषेण वैद्य रहता है, उसे लाने के लिए किसको भेजा जाए?" तब हनुमान छोटा रूप लेकर लंका गए और वैद्य सुषेण को उसके घर समेत तुरंत उठा लाए।

814 राम पदारबिंद सिर नायउ आइ सुषेन। 6.55.D1
815 कहा नाम गिरि औषधी जाहु पवनसुत लेन॥ 6.55.D2

वैद्य सुषेण ने आकर राम के चरणकमलों में सिर झुकाया। उसने पर्वत तथा औषधि का नाम बताया और कहा, "हे पवनपुत्र! वहाँ इस औषधि को लेने जाओ।"

816 राम चरन सरसिज उर राखी। चला प्रभंजनसुत बल भाषी॥ 6.56.C1
817 देखा सैल न औषध चीन्हा। सहसा कपि उपारि गिरि लीन्हा॥ 6.58.C7
प्रभु राम के चरणकमलों को हृदय में रखकर और सबको यह आश्वासन देकर "मैं औषधि लेकर अभी आता हूँ" पवनपुत्र हनुमान चल पड़े। वहाँ पहुँचकर उस पर्वत को देखा, पर वे औषधि को पहचान न सके। अतः उन्होंने एकदम से पर्वत को ही उखाड़ लिया और उसे लेकर वे वापस चल पड़े।

818 उहाँ राम लछिमनहि निहारी। बोले बचन मनुज अनुसारी॥ 6.61.C1
819 जौं जनतेउँ बन बंधु बिछोहू। पिता बचन मनतेउँ नहिं ओहू॥ 6.61.C6
उधर भाई लक्ष्मण की दशा देखकर राम सामान्य मनुष्यों की भाँति दुखी होकर विलाप करने लगे, "यदि जानता कि वन में भाई का विछोह होगा तो मैं पिता के वचन को मानकर वन को नहीं आता।"

820 प्रभु प्रलाप सुनि कान बिकल भए बानर निकर। 6.61.S1
821 आइ गयउ हनुमान जिमि करुना महँ बीर रस॥ 6.61.S2
प्रभु के विलाप को सुनकर सारे वानर व्याकुल हो गए। उसी समय हनुमान वहाँ ऐसे आए, जैसे करुणरस में वीररस आ गया हो।

822 तुरत बैद तब कीन्हि उपाई। उठि बैठे लछिमन हरषाई॥ 6.62.C2
823 यह बृत्तांत दसानन सुनेऊ। अति बिषाद पुनि पुनि सिर धुनेऊ॥ 6.62.C5
तब वैद्य सुषेण ने तुरंत उपचार किया, जिससे लक्ष्मण प्रसन्न होकर उठ बैठे। यह समाचार सुनकर रावण बड़े दुःख के साथ अपना सिर बार-बार पीटने लगा।

824 ब्याकुल कुंभकरन पहिं आवा। बिबिध जतन करि ताहि जगावा॥ 6.62.C6
825 कुंभकरन दुर्मद रन रंगा। चला दुर्ग तजि सेन न संगा॥ 6.64.C2
व्याकुल होकर वह अपने छोटे भाई कुम्भकर्ण के पास गया और तरह-तरह के उपाय करके उसको जगाकर सारी बात बताई। मद से चूर और युद्ध के उत्साह से भरा कुम्भकर्ण किले को छोड़कर बिना सेना को साथ लिए अकेला ही युद्ध के लिए चल पड़ा।

826 कुंभकरन कपि फौज बिडारी। सुनि धाई रजनीचर धारी॥ 6.67.C7
827 देखी राम बिकल कटकाई। रिपु अनीक नाना बिधि आई॥ 6.67.C8
कुम्भकर्ण ने वानर सेना को तितर-बितर कर दिया। यह सुनकर राक्षस-सेना भी प्रोत्साहित होकर दौड़ी। राम ने देखा कि शत्रु की तरह-तरह की सेना ने उनकी अपनी सेना को व्याकुल कर दिया है।

828 तब प्रभु कोपि तीब्र सर लीन्हा। धर ते भिन्न तासु सिर कीन्हा॥ 6.71.C4
829 बहु बिलाप दसकंधर करई। बंधु सीस पुनि पुनि उर धरई॥ 6.72.C4
प्रभु ने क्रोध से तीव्र बाण लिया और उससे कुम्भकर्ण का सिर धड़ से अलग कर दिया। रावण घोर विलाप करते हुए भाई का सिर अपने हृदय से बार-बार लगाता है।

830 मेघनाद तेहि अवसर आयउ। कहि बहु कथा पिता समुझायउ॥ 6.72.C6
831 देखेहु कालि मोरि मनुसाई। अबहिं बहुत का करौं बड़ाई॥ 6.72.C7
उस अवसर पर मेघनाद वहाँ आया और बहुतेरी कथाएँ कहकर अपने पिता को समझाने लगा। वह बोला, "कल मेरा पराक्रम देखना, अभी मैं अपनी बहुत प्रशंसा क्या करूँ?"

832 एहि बिधि जल्पत भयउ बिहाना। चहुँ दुआर लागे कपि नाना॥ 6.72.C9
इस तरह डींग मारते-मारते सबेरा हो गया। लंका के चारों दरवाजों पर बहुत-से वानर युद्ध के लिए आ पहुँचे।

833 मेघनाद मायामय रथ चढ़ि गयउ अकास। 6.72.D1
834 गर्जेउ अट्टहास करि भइ कपि कटकहि त्रास॥ 6.72.D2
मेघनाद तब माया के रथ पर चढ़कर आकाश में चला गया और जोर से अट्टहास करके गर्जा, जिससे वानरों की सेना डर गई।

835 तुम्ह लछिमन मारेहु रन ओही। देखि सभय सुर दुख अति मोही॥ 6.75.C8
836 जौं तेहि आजु बधें बिनु आवौं। तौ रघुपति सेवक न कहावौं॥ 6.75.C13
तब रघुनाथ ने कहा, "हे लक्ष्मण! जाओ, आज मेघनाद को युद्ध में अवश्य मार देना। देवताओं को डरा हुआ देखकर मुझे बड़ा दु:ख हो रहा है।" लक्ष्मण बोले, "हे

प्रभु! यदि आज उसका वध किए बिना लौटूँ तो मैं राम का सेवक नहीं कहलाऊँगा।"

837 सुमिरि कोसलाधीस प्रतापा। सर संधान कीन्ह करि दापा॥ 6.76.C15
838 छाड़ा बान माझ उर लागा। मरती बार कपटु सब त्यागा॥ 6.76.C16
कोसलपति राम के प्रताप का स्मरण करके लक्ष्मण ने वीरोचित अभिमान से बाण चढ़ाकर उसे मेघनाद की ओर छोड़ा, जो उसकी छाती के बीच में जा लगा। मरते समय उसने सब कपट छोड़ दिया।

839 सुत बध सुना दसानन जबहीं। मुरुछित भयउ परेउ महि तबहीं॥ 6.77.C6
840 चलेउ निसाचर कटकु अपारा। चतुरंगिनी अनी बहु धारा॥ 6.79.C1
अपने पुत्र की मृत्यु का समाचार सुनते ही रावण बेहोश होकर धरती पर गिर पड़ा। होश में आने पर रावण अपार चतुरंगिणी सेना के कई दल लेकर युद्ध के लिए चल पड़ा।

841 इत उत झपटि दपटि कपि जोधा। मर्दै लाग भयउ अति क्रोधा॥ 6.82.C5
842 पाहि पाहि रघुबीर गोसाईं। यह खल खाइ काल की नाईं॥ 6.82.C7
वह अत्यंत क्रोधित होकर वानर सेना को झपटकर और डपटकर मसलने लगा। व्याकुल होकर वानर-भालुओं ने प्रभु राम के पास जाकर दुहाई दी, "हे प्रभु! रक्षा कीजिए! रक्षा कीजिए! यह दुष्ट हमें काल के समान खाए जा रहा है।"

843 बहुरि राम सब तन चितइ बोले बचन गँभीर। 6.89.D1
844 द्वंदजुद्ध देखहु सकल श्रमित भए अति बीर॥ 6.89.D2
तब सबकी ओर देखकर राम गम्भीर वचन बोले, "हे वीरो! तुम सब बहुत ही थक गए हो, इसलिए अब मेरा और रावण का द्वन्द्व युद्ध देखो।"

845 दस दस बान भाल दस मारे। निसरि गए चले रुधिर पनारे॥ 6.92.C8
846 तीस तीर रघुबीर पबारे। भुजन्हि समेत सीस महि पारे॥ 6.92.C10

राम ने रावण के दसों सिरों में दस-दस बाण मारे, जो आर-पार निकल गए। उसके सिरों से खून के पनाले बह चले। प्रभु ने फिर तीस तीर चलाकर रावण के दसों सिर और बीसों भुजाओं को काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया।

847 काटत बढ़हिं सीस समुदाई। जिमि प्रति लाभ लोभ अधिकाई ॥ 6.102.C1
848 मरइ न रिपु श्रम भयउ बिसेषा। राम बिभीषन तन तब देखा ॥ 6.102.C2
कटते ही रावण के सिर उस प्रकार बढ़ते हैं, जैसे लोभी का लोभ उसके हर लाभ के बाद बढ़ता है। जब विशेष श्रम के बाद भी शत्रु मरता नहीं दिखा, प्रभु ने विभीषण की ओर देखा।

849 उमा काल मर जाकीं ईछा। सो प्रभु जन कर प्रीति परीछा ॥ 6.102.C3
850 नाभिकुंड पियूष बस याकें। नाथ जिअत रावनु बल ताकें ॥ 6.102.C5
शिव जी कहते हैं, "हे पार्वती! जिनकी इच्छा मात्र से काल भी मर जाता है, वे प्रभु अपने सेवक विभीषण के प्रेम की परीक्षा ले रहे हैं।" विभीषण बोले, "हे नाथ! रावण की नाभि में अमृत का निवास है, वह उसी के बल पर जीता है।"

851 खैंचि सरासन श्रवन लगि छाड़े सर एकतीस। 6.102.D1
852 रघुनायक सायक चले मानहुँ काल फनीस ॥ 6.102.D2
तब धनुष को कानों तक खींचकर, राम ने इकतीस बाण छोड़े। उनके बाण ऐसे चले जैसे वे काल के सर्प हों।

853 सायक एक नाभि सर सोषा। अपर लगे भुज सिर करि रोषा ॥ 6.103.C1
854 धरनि धसइ धर धाव प्रचंडा। तब सर हति प्रभु कृत दुइ खंडा॥ 6.103.C3
एक बाण ने नाभि के अमृतकुण्ड को सोख लिया, शेष बाण क्रुद्ध होकर उसके सिरों और भुजाओं में जा लगे। उसके धड़ के प्रचंड वेग से दौड़ने के कारण धरती धँसने लगी। तब प्रभु ने बाण मारकर धड़ के दो टुकड़े कर दिए।

855 गर्जेउ मरत घोर रव भारी। कहाँ रामु रन हतौं पचारी ॥ 6.103.C4
मरते समय भी रावण गर्जना करता हुआ बोला, "राम कहाँ हैं? मैं ललकारकर उनको रण में मारूँगा।"

856 तासु तेज समान प्रभु आनन। हरषे देखि संभु चतुरानन॥ 6.103.C9
857 बरषहिं सुमन देव मुनि बृंदा। जय कृपाल जय जयति मुकुंदा॥ 6.103.C11
मरते समय उसका तेज प्रभु के मुख में समा गया। यह देखकर शिव और ब्रह्मा बड़े प्रसन्न हुए। देवता और ऋषि-मुनि फूल बरसाने लगे और बोले, "हे कृपालु! आपकी जय हो। हे मुकुन्द भगवान, आपकी जय हो!"

858 कृपादृष्टि करि बृष्टि प्रभु अभय किए सुर बृंद। 6.103.D1
859 भालु कीस सब हरषे जय सुख धाम मुकुंद॥ 6.103.D2
प्रभु राम ने कृपादृष्टि की वर्षा से देवताओं को निर्भय कर दिया। वानर-भालू सब बहुत हर्षित हुए और सुख के धाम मुकुन्द रामचन्द्र की जय-जयकार करने लगे।

860 सब मिलि जाहु बिभीषन साथा। सारेहु तिलक कहेउ रघुनाथा॥ 6.106.C3
861 सादर सिंहासन बैठारी। तिलक सारि अस्तुति अनुसारी॥ 6.106.C6
रघुकुल के नाथ राम ने कहा, "तुम सब विभीषण जी के साथ जाओ और उनका राजतिलक करो।" सब ने विभीषण को आदर से लंका के सिंहासन पर बैठाकर तिलक करके उनकी स्तुति की।

862 पुनि प्रभु बोलि लियउ हनुमाना। लंका जाहु कहेउ भगवाना॥ 6.107.C1
863 समाचार जानकिहि सुनावहु। तासु कुसल लै तुम्ह चलि आवहु॥ 6.107.C2
फिर प्रभु ने हनुमान को बुलाकर कहा, "लंका जाकर सीता को सब समाचार सुनाओ और उनकी कुशलता के समाचार लेकर लौट आओ।"

864 सब बिधि कुसल कोसलाधीसा। मातु समर जीत्यो दससीसा॥ 6.107.C7
सीता के पास पहुँचकर हनुमान बोले, "हे माता! कोसलपति प्रभु राम सब प्रकार से कुशल हैं, उन्होंने युद्ध में दस सिरवाले रावण को जीत लिया है।"

865 सुनु सुत सदगुन सकल तव हृदयँ बसहुँ हनुमंत। 6.107.D1
866 सानुकूल कोसलपति रहहुँ समेत अनंत॥ 6.107.D2
सीता ने कहा, "हे पुत्र! सुनो, सारे सदगुण तुम्हारे हृदय में बसें और लक्ष्मण सहित कोसलपति प्रभु तुम पर सदा प्रसन्न रहें।"

867 अब सोइ जतन करहु तुम्ह ताता। देखौं नयन स्याम मृदु गाता॥ 6.108.C1
868 तब हनुमान राम पहिं जाई। जनकसुता कै कुसल सुनाई॥ 6.108.C2
"हे तात! अब तुम वही उपाय करो जिससे मैं श्याम और कोमल शरीरवाले अपने स्वामी के दर्शन कर सकूँ।" तब राम के पास जाकर हनुमान ने सीता की कुशलता के समाचार सुनाए।

869 सुनि संदेसु भानुकुलभूषन। बोलि लिए जुबराज बिभीषन॥ 6.108.C3
870 मारुतसुत के संग सिधावहु। सादर जनकसुतहि लै आवहु॥ 6.108.C4
समाचार सुनकर सूर्यवंश के भूषण राम ने युवराज अंगद और विभीषण को बुलाकर कहा, "तुम पवनपुत्र हनुमान के साथ जाओ और सीता को यहाँ आदरपूर्वक ले आओ।"

871 सीता प्रथम अनल महुँ राखी। प्रगट कीन्हि चह अंतर साखी॥ 6.108.C14
सीता के आने पर उनके असली रूप को प्रकट करने लिए राम ने उन्हें पहले अग्नि में प्रवेश करने को कहा।

872 जौं मन बच क्रम मम उर माहीं। तजि रघुबीर आन गति नाहीं॥ 6.109.C7
873 तौ कृसानु सब कै गति जाना। मो कहुँ होउ श्रीखंड समाना॥ 6.109.C8
तब सीता बोलीं, "यदि मन, कर्म और वचन से मेरे हृदय में श्री रघुवीर को छोड़कर किसी दूसरे का भाव नहीं है, तो अग्निदेव जो सब के मन की गति जानते हैं, मेरे लिए चन्दन के समान शीतल हो जायें।"

874 धरि रूप पावक पानि गहि श्री सत्य श्रुति जग बिदित जो। 6.109.X13
875 जिमि छीरसागर इंदिरा रामहि समर्पी आनि सो॥ 6.109.X14
तब अग्निदेव ने शरीर धारण करके, वेदों और संसार में प्रसिद्ध वास्तविक सीता का हाथ राम को ऐसे सौंप दिया, जैसे क्षीरसागर ने विष्णु को लक्ष्मी सौंपी थीं।

876 सो राम बाम बिभाग राजति रुचिर अति सोभा भली। 6.109.X15
877 नव नील नीरज निकट मानहुँ कनक पंकज की कली॥ 6.109.X16

सीता श्री रामचन्द्र की बायीं ओर विराजित होकर ऐसे लग रहीं थीं, जैसे नए खिले नील-कमल के पास सोने के कमल की कली शोभा दे रही हो।

878 जनकसुता समेत प्रभु सोभा अमित अपार। 6.109b.D1
879 देखि भालु कपि हरषे जय रघुपति सुख सार॥ 6.109b.D2

सीता सहित प्रभु राम की अमित और अपार शोभा देखकर वानर-भालू हर्षित हो गए और सुख के सागर रघुनाथ की जय-जयकार करने लगे।

880 अनुज जानकी सहित प्रभु कुसल कोसलाधीस। 6.112.D1
881 सोभा देखि हरषि मन अस्तुति कर सुर ईस॥ 6.112.D2

छोटे भाई लक्ष्मण और जानकी के साथ परम कुशल रामचन्द्र की शोभा देखकर देवराज इन्द्र मन ही मन प्रसन्न होकर उनकी स्तुति करने लगे।

882 अब करि कृपा बिलोकि मोहि आयसु देहु कृपाल। 6.113.D1
883 काह करौं सुनि प्रिय बचन बोले दीनदयाल॥ 6.113.D2

वे बोले, "हे कृपालु! अब मेरी ओर कृपापूर्वक देखकर आज्ञा दें कि मैं क्या सेवा करूँ?" इन्द्र के प्रिय वचन सुनकर दीनदयाल प्रभु यह बोले,

884 सुनु सुरपति कपि भालु हमारे। परे भूमि निसचरन्हि जे मारे॥ 6.114.C1
885 मम हित लागि तजे इन्ह प्राना। सकल जिआउ सुरेस सुजाना॥ 6.114.C2

"सुनो देवराज इन्द्र! हमारे जो वानर-भालू राक्षसों के द्वारा मारे गए, वे सब धरती पर पड़े हैं। इन सबने मेरे हित के लिए अपने प्राण त्यागे हैं। हे सुजान इन्द्र! इनको जीवित कर दीजिए।"

886 प्रभु सक त्रिभुअन मारि जिआई। केवल सक्रहि दीन्हि बड़ाई॥ 6.114.C4
887 सुधा बरषि कपि भालु जिआए। हरषि उठे सब प्रभु पहिं आए॥ 6.114.C5

जो राम तीनों लोकों को मारकर पुनः जीवित कर सकते हैं, उन्होंने केवल इन्द्र को इसका श्रेय दिया है। इन्द्र ने अमृत बरसाकर वानर-भालुओं को जीवित किया। वे सब प्रसन्न होकर उठे और प्रभु के पास आए।

888 राम सरिस को दीन हितकारी। कीन्हे मुकुत निसाचर झारी॥ 6.114.C9
889 खल मल धाम काम रत रावन। गति पाई जो मुनिबर पाव न॥ 6.114.C10
प्रभु राम के समान दीनों का भला करने वाला और कौन है, उन्होंने राक्षसों तक को मुक्ति दे दी। दुष्ट, पापों के घर और कामी रावण को जो गति प्रभु ने दी, वह श्रेष्ठ मुनि भी नहीं पाते।

890 सुमन बरषि सब सुर चले चढ़ि चढ़ि रुचिर बिमान। 6.114a.D1
891 देखि सुअवसर प्रभु पहिं आयउ संभु सुजान॥ 6.114a.D2
फूलों की वर्षा करते हुए सारे देवता अपने-अपने सुंदर विमानों में वापस चले गए। तब उचित अवसर जानकर सुजान शिव जी प्रभु राम के पास आए।

892 परम प्रीति कर जोरि जुग नलिन नयन भरि बारि। 6.114b.D1
893 पुलकित तन गदगद गिराँ बिनय करत त्रिपुरारि॥ 6.114b.D2
अत्यंत प्रेम से दोनों हाथ जोड़कर, अपने कमल जैसे नेत्रों में जल भरकर और पुलकित होकर, त्रिपुरारि शिव जी गदगद वाणी से राम की विनती करने लगे।

894 करि बिनती जब संभु सिधाए। तब प्रभु निकट बिभीषनु आए॥ 6.116.C1
895 दीन मलीन हीन मति जाती। मो पर कृपा कीन्हि बहु भाँती॥ 6.116.C4
जब शिव जी स्तुति करके चले गए, विभीषण प्रभु के पास आकर बोले, "हे प्रभु! आपने मुझ दीन, पापी, बुद्धि और जाति से हीन पर बहुत प्रकार से कृपा की है।"

896 सुनत बचन मृदु दीनदयाला। सजल भए द्वौ नयन बिसाला॥ 6.116.C8
विभीषण के कोमल वचन सुनकर दीनों पर दया करनेवाले राम के दोनों विशाल नेत्रों में जल भर आया।

897 बहुरि बिभीषन भवन सिधायो। मनि गन बसन बिमान भरायो॥ 6.117.C3
898 चढ़ि बिमान सुनु सखा बिभीषन। गगन जाइ बरषहु पट भूषन॥ 6.117.C5
फिर विभीषण अपने महल में गए और उन्होंने मणियों और वस्त्रों से पुष्पक विमान को भरवाया। राम ने कहा, "हे मित्र! विमान को आकाश में ले जाकर इन वस्त्रों और गहनों को नीचे बरसा दो।"

899 भालु कपिन्ह पट भूषन पाए। पहिरि पहिरि रघुपति पहिं आए॥ 6.118.C1
जब भालुओं और वानरों को वस्त्र और गहने मिले, उन्हें पहन-पहनकर वे रघुनाथ के पास आए।

900 तुम्हरें बल मैं रावनु मार्यो। तिलक बिभीषन कहँ पुनि सार्यो॥ 6.118.C4
901 निज निज गृह अब तुम्ह सब जाहू। सुमिरेहु मोहि डरपहु जनि काहू॥ 6.118.C5
प्रभु ने कहा, "मैंने तुम्हारे बल से ही रावण को मारा और विभीषण का राजतिलक किया। अब तुम सब अपने-अपने घर लौट जाओ। मेरा स्मरण करते रहना और किसी से डरना नहीं।"

902 प्रभु प्रेरित कपि भालु सब राम रूप उर राखि। 6.118a.D1
903 हरष बिषाद सहित चले बिनय बिबिध बिधि भाषि॥ 6.118a.D2
प्रभु की आज्ञा मानकर सब वानर भालू राम के स्वरूप को अपने हृदय में रखकर अनेकों प्रकार से विनती करके हर्ष और विषाद के साथ अपने-अपने घर लौट चले।

904 कपिपति नील रीछपति अंगद नल हनुमान। 6.118b.D1
905 सहित बिभीषन अपर जे जूथप कपि बलवान॥ 6.118b.D2
906 कहि न सकहिं कछु प्रेम बस भरि भरि लोचन बारि। 6.118c.D1
907 सन्मुख चितवहिं राम तन नयन निमेष निवारि॥ 6.118c.D2
वानरराज सुग्रीव, नील, जामवंत, अंगद, नल, हनुमान, विभीषण और अन्य बलशाली वानर सेनापति प्रेम के वश कुछ कह नहीं पा रहे हैं। वे सब आँखों में जल भरकर बिना पलक झपके केवल रामचन्द्र जी की ओर देख रहे हैं।

908 अतिसय प्रीति देखि रघुराई। लीन्हे सकल बिमान चढ़ाई॥ 6.119.C1
909 सिंहासन अति उच्च मनोहर। श्री समेत प्रभु बैठे ता पर॥ 6.119.C4
उनका अतिशय प्रेम देखकर रघुनाथने सबको पुष्पक विमान में बिठा लिया। विमान में एक ऊँचा मनोहर सिंहासन था, उस पर सीता सहित राम बैठे।

910 रुचिर बिमानु चलेउ अति आतुर। कीन्ही सुमन बृष्टि हरषे सुर॥ 6.119.C6
911 कह रघुबीर देखु रन सीता। लछिमन इहाँ हत्यो इँद्रजीता॥ 6.119.C9

सुंदर विमान अत्यंत तेजी से चल दिया, जिसे देखकर देवता हर्षित होकर फूलों की वर्षा करने लगे। राम बोले, "हे सीते! नीचे रणभूमि को देखो। लक्ष्मण ने मेघनाद को यहाँ मारा था।"

912 हनूमान अंगद के मारे। रन महि परे निसाचर भारे॥ 6.119.C10
913 कुंभकरन रावन द्वौ भाई। इहाँ हते सुर मुनि दुखदाई॥ 6.119.C11
"हनुमान और अंगद के मारे हुए बड़े-बड़े राक्षस इस रणभूमि में पड़े हैं। देवताओं और मुनियों को दु:ख देनेवाले रावण और कुम्भकर्ण दोनों भाई भी यहाँ मारे गए।"

914 इहाँ सेतु बाँध्यों अरु थापेउँ सिव सुख धाम। 6.119a.D1
915 सीता सहित कृपानिधि संभुहि कीन्ह प्रनाम॥ 6.119a.D2
"यहाँ समुद्र पर पुल बना और सुख के धाम शिव जी की स्थापना की गई।" यह कहकर सीता सहित राम ने महादेव को प्रणाम किया।

916 तुरत बिमान तहाँ चलि आवा। दंडक बन जहँ परम सुहावा॥ 6.120.C1
917 सकल रिषिन्ह सन पाइ असीसा। चित्रकूट आए जगदीसा॥ 6.120.C3
विमान शीघ्र ही वहाँ जा पहुँचा, जहाँ परम सुंदर दंडकवन था। सब ऋषियों से आशीर्वाद लेकर जगत के ईश्वर प्रभु राम चित्रकूट पहुँचे।

918 तीरथपति पुनि देखु प्रयागा। निरखत जन्म कोटि अघ भागा॥ 6.120.C7
919 पुनि देखु अवधपुरी अति पावनि। त्रिबिध ताप भव रोग नसावनि॥ 6.120.C9
उन्होंने फिर सीता को तीर्थराज प्रयाग दिखाया, जिसके दर्शन मात्र से करोड़ों जन्मों के पाप भाग जाते हैं। फिर अत्यंत पवित्र अयोध्या नगरी के दर्शन किए, जो तीनों प्रकार के तापों और भव रोग का नाश करनेवाली है।

920 प्रभु हनुमंतहि कहा बुझाई। धरि बटु रूप अवधपुर जाई॥ 6.121.C1
921 भरतहि कुसल हमारि सुनाएहु। समाचार लै तुम्ह चलि आएहु॥ 6.121.C2
प्रभु ने तब हनुमान को समझाकर कहा, "तुम ब्रह्मचारी के रूप में अयोध्या जाओ। भरत को हमारी कुशलता सुनाकर और उनका समाचार लेकर वापस आओ।"

922 समर बिजय रघुबीर के चरित जे सुनहिं सुजान। 6.121a.D1
923 बिजय बिबेक बिभूति नित तिन्हहि देहिं भगवान॥ 6.121a.D2

जो बुद्धिमान लोग श्री रघुनाथ के रण में विजय के चरित्र सुनते हैं, उनको भगवान सदा विजय, विवेक और ऐश्वर्य देते हैं।

उत्तरकाण्ड

924 रहा एक दिन अवधि कर अति आरत पुर लोग। 7.0a.D1
925 जहँ तहँ सोचहिं नारि नर कृस तन राम बियोग॥ 7.0a.D2
राम के वनवास से लौटने की अवधि का मात्र एक दिन रह गया है, जिससे अयोध्या के लोग बड़े अधीर हो रहे हैं। प्रभु के वियोग में दुबले हुए स्त्री और पुरुष जहाँ-तहाँ सोच-विचार कर रहे हैं।

926 राम बिरह सागर महँ भरत मगन मन होत। 7.1a.D1
927 बिप्र रूप धरि पवनसुत आइ गयउ जनु पोत॥ 7.1a.D2
राम के विरहरूपी समुद्र में भरत का मन डूब रहा था। उसी समय पवनपुत्र हनुमान ब्राह्मण के रूप में ऐसे आए, जैसे डूबते को बचाने के लिए कोई नाव आई हो।

928 देखत हनूमान अति हरषेउ। पुलक गात लोचन जल बरषेउ॥ 7.2.C1
929 रघुकुल तिलक सुजन सुखदाता। आयउ कुसल देव मुनि त्राता॥ 7.2.C4
हनुमान भरत को देखते ही अति प्रसन्न हुए। उनका शरीर पुलकित हो गया, आँखों से आँसू बहने लगे। वे कहने लगे, "सज्जनों को सुख देनेवाले तथा देवताओं और मुनियों की रक्षा करनेवाले, प्रभु राम सकुशल वापस आ गए हैं।"

930 हरषि भरत कोसलपुर आए। समाचार सब गुरहि सुनाए॥ 7.3.C1
भरत प्रसन्न होकर अयोध्यापुरी में आए और उन्होंने गुरु को सब समाचार सुनाया।

931 सुनत सकल जननीं उठि धाईं। कहि प्रभु कुसल भरत समुझाईं॥ 7.3.C3
932 समाचार पुरबासिन्ह पाए। नर अरु नारि हरषि सब धाए॥ 7.3.C4
समाचार सुनते ही सब माताएँ दौड़ी आईं। भरत ने प्रभु की कुशल कहकर सबको समझाया। जब नगर के लोगों को यह खबर मिली, सभी स्त्री-पुरुष हर्षित होकर दौड़ पड़े।

933 आवत देखि लोग सब कृपासिंधु भगवान। 7.4a.D1
934 नगर निकट प्रभु प्रेरेउ उतरेउ भूमि बिमान॥ 7.4a.D2
जब कृपा के सागर भगवान राम ने लोगों को आते देखा, उन्होंने पुष्पक विमान को नगर के पास धरती पर उतारा।

935 आए भरत संग सब लोगा। कृस तन श्रीरघुबीर बियोगा॥ 7.5.C1
936 बामदेव बसिष्ट मुनिनायक। देखे प्रभु महि धरि धनु सायक॥ 7.5.C2
भरत के साथ आए सभी लोगों के शरीर प्रभु के वियोग में दुबले हो गए थे। वामदेव, वसिष्ठ आदि श्रेष्ठ ऋषि-मुनियों को देखकर प्रभु ने अपने धनुष-बाण धरती पर रख दिए।

937 धाइ धरे गुर चरन सरोरुह। अनुज सहित अति पुलक तनोरुह॥ 7.5.C3
938 सकल द्विजन्ह मिलि नायउ माथा। धर्म धुरंधर रघुकुलनाथा॥ 7.5.C5
छोटे भाई लक्ष्मण सहित दौड़कर और अति पुलकित होकर उन्होंने गुरु के चरणकमल पकड़ लिए। धर्म की धुरी को धारण करनेवाले रघुकुल के स्वामी रामचन्द्र ने सब ब्राह्मणों को सिर नवाया।

939 गहे भरत पुनि प्रभु पद पंकज। नमत जिन्हहि सुर मुनि संकर अज॥ 7.5.C6
940 परे भूमि नहिं उठत उठाए। बर करि कृपासिंधु उर लाए॥ 7.5.C7
फिर भरत ने प्रभु के वे चरणकमल पकड़ लिए, जिनकी वंदना देवता, मुनि, शंकर और ब्रह्मा भी करते हैं। भरत धरती पर गिर पड़े, वे उठाने से भी नहीं उठते। तब कृपासिंधु राम ने जबरदस्ती उन्हें उठाकर हृदय से लगा लिया।

941 पुनि प्रभु हरषि सत्रुहन भेंटे हृदयँ लगाइ। 7.5.D1
942 लछिमन भरत मिले तब परम प्रेम दोउ भाइ॥ 7.5.D2
फिर बड़ी प्रसन्नता से प्रभु शत्रुघ्न को हृदय से लगाकर मिले। भरत और लक्ष्मण दोनों भाई भी बड़े प्रेम से मिले।

943 अमित रूप प्रगटे तेहि काला। जथा जोग मिले सबहि कृपाला॥ 7.6.C5
944 कृपादृष्टि रघुबीर बिलोकी। किए सकल नर नारि बिसोकी॥ 7.6.C6

उस समय कृपालु राम असंख्य रूपों में प्रकट हो गए और सबसे यथायोग्य एक ही साथ मिले। राम ने सब स्त्री-पुरुषों को कृपा की दृष्टि से देखकर शोक से रहित कर दिया।

945 पुनि रघुपति सब सखा बोलाए। मुनि पद लागहु सकल सिखाए॥ 7.8.C5
946 गुर बसिष्ट कुलपूज्य हमारे। इन्ह की कृपाँ दनुज रन मारे॥ 7.8.C6
फिर उन्होंने सब मित्रों को बुलाया और समझाया कि मुनि के चरणों में पड़ो। प्रभु ने कहा, "गुरु वसिष्ठ हमारे कुल के पूज्य हैं, इनकी कृपा से ही रणभूमि में हमने राक्षसों को मारा है।"

947 ए सब सखा सुनहु मुनि मेरे। भए समर सागर कहँ बेरे॥ 7.8.C7
फिर उन्होंने गुरु से कहा, "हे मुनि! सुनिए, ये सब मेरे मित्र हैं, जो युद्धरूपी सागर में मेरे लिए जहाज के समान सिद्ध हुए।"

948 प्रभु जानी कैकई लजानी। प्रथम तासु गृह गए भवानी॥ 7.10.C1
949 ताहि प्रबोधि बहुत सुख दीन्हा। पुनि निज भवन गवन हरि कीन्हा॥ 7.10.C2
शिव जी कहते हैं, "हे पार्वती! यह सोचकर कि माता कैकेयी बहुत लज्जित हैं, प्रभु सबसे पहले उनके महल में गए। उन्हें समझा-बुझाकर बहुत सुख दिया, फिर वे अपने महल को गए।"

950 गुर बसिष्ट द्विज लिए बुलाई। आजु सुघरी सुदिन समुदाई॥ 7.10.C4
गुरु वसिष्ठ ने ब्राह्मणों को बुलवाया और कहा, "आज शुभ घड़ी, सुन्दर दिन आदि सभी शुभ करने वाला योग है।"

951 सुनु खगेस तेहि अवसर ब्रह्मा सिव मुनि बृंद। 7.11c.D1
952 चढ़ि बिमान आए सब सुर देखन सुखकंद॥ 7.11c.D2
काकभुशुण्डि कहते हैं, "हे पक्षिराज गरुड़! उस अवसर पर ब्रह्मा, शिव, ऋषि-मुनियों के समूह और विमानों पर चढ़कर सब देवता, सुख के कंद रामचन्द्र के दर्शन करने आए।"

953 प्रभु बिलोकि मुनि मन अनुरागा। तुरत दिब्य सिंघासन मागा॥ 7.12.C1
954 रबि सम तेज सो बरनि न जाई। बैठे राम द्विजन्ह सिरु नाई॥ 7.12.C2
गुरु ने तब राम को बुलवाया, उन्हें देखकर मन में प्रेम उमड़ आया। उन्होंने तुरंत ही एक दिव्य सिंहासन मँगवाया, जिसका तेज सूर्य के समान था। उसके सौन्दर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। ब्राह्मणों को सिर नवाकर रामचन्द्र उस पर बैठ गए।

955 प्रथम तिलक बसिष्ट मुनि कीन्हा। पुनि सब बिप्रन्ह आयसु दीन्हा॥ 7.12.C5
956 सुत बिलोकि हरषीं महतारी। बार बार आरती उतारी॥ 7.12.C6
सबसे पहले गुरु वसिष्ठ ने तिलक किया, फिर उन्होंने सब ब्राह्मणों को तिलक करने की आज्ञा दी। पुत्र को राजसिंहासन पर देखकर माताएँ बहुत हर्षित हुईं और उन्होंने बार-बार आरती उतारी।

957 बैनतेय सुनु संभु तब आए जहँ रघुबीर। 7.13b.D1
958 बिनय करत गदगद गिरा पूरित पुलक सरीर॥ 7.13b.D2
काकभुशुण्डि कहते हैं, "हे गरुड़! सुनिए, उस समय शिव जी रघुवीर के पास आए। उनका शरीर पुलकित हो गया, वे गदगद स्वर से स्तुति करने लगे।"

959 बार बार बर मागउँ हरषि देहु श्रीरंग। 7.14a.D1
960 पद सरोज अनपायनी भगति सदा सतसंग॥ 7.14a.D2
"हे श्रीपते! मैं बार-बार यही वर माँगता हूँ कि मुझे आप के चरणकमलों की अचल भक्ति और आपके भक्तों का सत्संग सदा मिले। आप प्रसन्न होकर मुझे यही दीजिए।"

961 ब्रह्मानंद मगन कपि सब कें प्रभु पद प्रीति। 7.15.D1
962 जात न जाने दिवस तिन्ह गए मास षट बीति॥ 7.15.D2
सारे वानर प्रभु के चरणों में प्रेम के कारण ब्रह्मानंद में मग्न हैं। दिन जाते हुए किसी ने जाना नहीं, इस प्रकार छह महीने बीत गए।

963 तब रघुपति सब सखा बोलाए। आइ सबन्हि सादर सिरु नाए॥ 7.16.C2
तब राम ने तब सारे मित्रों को बुलाया। आकर सबने सादर सिर नवाया।

964 परम प्रीति समीप बैठारे। भगत सुखद मृदु बचन उचारे॥ 7.16.C3
965 तुम्ह अति कीन्हि मोरि सेवकाई। मुख पर केहि बिधि करौं बड़ाई॥ 7.16.C4
बड़े प्रेम से प्रभु ने उनको अपने पास बैठाया और भक्तों को सुख देनेवाले कोमल वचन बोले, "तुमने मेरी बड़ी सेवा की है, तुम्हारे मुँह पर ही तुम्हारी प्रशंसा कैसे करूँ।"

966 ताते मोहि तुम्ह अति प्रिय लागे। मम हित लागि भवन सुख त्यागे॥ 7.16.C5
967 सब कें प्रिय सेवक यह नीती। मोरें अधिक दास पर प्रीती॥ 7.16.C8
"मेरे हित के लिए तुमने घर और अन्य सुखों को छोड़ दिया, जिससे तुम मुझे अत्यंत प्रिय हो। सेवक तो सबको प्रिय लगते हैं, यह स्वाभाविक है; लेकिन मेरा तो उन पर विशेष प्रेम है।"

968 तब प्रभु भूषन बसन मगाए। नाना रंग अनूप सुहाए॥ 7.17.C5
तब प्रभु ने उनके लिए रंग-बिरंगे अनुपम सुन्दर कपड़े-गहने मँगवाए।

969 जामवंत नीलादि सब पहिराए रघुनाथ। 7.17a.D1
970 हियँ धरि राम रूप सब चले नाइ पद माथ॥ 7.17a.D2
जामवंत और नील आदि सबको राम ने स्वयं भूषण और वस्त्र पहनाए। वे सब हृदय में प्रभु के स्वरूप को रखकर और उनके चरणों में सिर नवाकर अपने-अपने घर को चल दिए।

971 तब सुग्रीव चरन गहि नाना। भाँति बिनय कीन्हे हनुमाना॥ 7.19.C7
972 दिन दस करि रघुपति पद सेवा। पुनि तव चरन देखिहउँ देवा॥ 7.19.C8
तब कपिराज सुग्रीव के चरण पकड़कर हनुमान ने अनेक प्रकार से विनती की और कहा, "हे देव! मुझे दस दिन रघुनाथ जी के चरणों की सेवा में रहने की आज्ञा दें, फिर मैं आकर आपके चरणों के दर्शन करूँगा।"

973 पुन्य पुंज तुम्ह पवनकुमारा। सेवहु जाइ कृपा आगारा॥ 7.19.C9
सुग्रीव बोले, "हे पवनपुत्र! तुम पुण्य की राशि हो। जाओ, कृपा के धाम रामचन्द्र की सेवा करो।"

974 पुनि कृपाल लियो बोलि निषादा। दीन्हे भूषन बसन प्रसादा॥ 7.20.C1
975 तुम्ह मम सखा भरत सम भ्राता। सदा रहेहु पुर आवत जाता॥ 7.20.C3
फिर कृपालु राम ने निषादराज गुह को बुलाकर उन्हें भूषण-वस्त्र आदि दिए और कहा, "तुम मेरे मित्र और भरत के समान भाई हो। अयोध्यापुरी सदा आते-जाते रहना।"

976 राम राज बैठें त्रैलोका। हरषित भए गए सब सोका॥ 7.20.C7
रामचन्द्र के राजा होने पर तीनों लोकों में लोग हर्षित हो गए। उनके सारे दु:ख और शोक जाते रहे।

977 बरनाश्रम निज निज धरम निरत बेद पथ लोग। 7.20.D1
978 चलहिं सदा पावहिं सुखहि नहिं भय सोक न रोग॥ 7.20.D2
सब लोग अपने-अपने वर्ण और आश्रम के धर्म के अनुसार रहते हैं। वेदों के बताए हुए मार्ग पर चलकर वे सदा सुख पाते हैं। उन्हें न भय है, न शोक है और न ही कोई रोग।

979 राम राज नभगेस सुनु सचराचर जग माहिं। 7.21.D1
980 काल कर्म सुभाव गुन कृत दुख काहुहि नाहिं॥ 7.21.D2
काकभुशुण्डि कहते हैं, "हे पक्षिराज गरुड़! सुनिए, राम के राज्य में सारे जड़-चेतन जगत में काल, कर्म, स्वभाव और गुणों से पैदा हुए दु:ख किसी को नहीं सताते।"

981 भूमि सप्त सागर मेखला। एक भूप रघुपति कोसला॥ 7.22.C1
982 राम राज कर सुख संपदा। बरनि न सकइ फनीस सारदा॥ 7.22.C6
कोसलपुरी में राम सात समुद्रों की करधनीवाली पृथ्वी के एक मात्र राजा हैं। रामराज्य के सुख और समृद्धि का वर्णन शेष और सरस्वती भी नहीं कर सकते।

983 सब उदार सब पर उपकारी। बिप्र चरन सेवक नर नारी॥ 7.22.C7
984 ससि संपन्न सदा रह धरनी। त्रेताँ भइ कृतजुग कै करनी॥ 7.23.C6
सब नर-नारी उदार हैं, परोपकारी हैं, ब्राह्मणों के चरणों के सेवक हैं। यहाँ की धरती सदा खेती से भरी रहती है। त्रेतायुग में सतयुग जैसा वातावरण हो गया।

985 राम करहिं भ्रातन्ह पर प्रीती। नाना भाँति सिखावहिं नीती॥ 7.25.C3
986 हरषित रहहिं नगर के लोगा। करहिं सकल सुर दुर्लभ भोगा॥ 7.25.C4
राम अपने भाइयों से अत्यंत प्रेम रखते हैं और उन्हें कई प्रकार से नीतियाँ सिखाते हैं। नगर के लोग प्रसन्न रहते हैं, जो देवताओं को भी दुर्लभ हों, ऐसे सुख भोगते हैं।

987 दुइ सुत सुन्दर सीताँ जाए। लव कुस बेद पुरानन्ह गाए॥ 7.25.C6
988 दोउ बिजई बिनई गुन मंदिर। हरि प्रतिबिंब मनहुँ अति सुंदर॥ 7.25.C7
सीता ने लव और कुश दो पुत्रों को जन्म दिया, जिनका वेद-पुराणों ने वर्णन किया है। दोनों भाई बड़े योद्धा, विनम्र, गुणों के धाम और अति सुंदर हैं; जैसे राम की छाया ही हों।

989 ग्यान गिरा गोतीत अज माया मन गुन पार। 7.25.D1
990 सोइ सच्चिदानंद घन कर नर चरित उदार॥ 7.25.D2
जो ज्ञान, वाणी और इन्द्रियों से परे और अजन्मा हैं, माया, मन और गुणों से परे हैं, वही सच्चिदानन्द भगवान श्रेष्ठ मानव-लीला करते हैं।

991 गिरिजा सुनहु बिसद यह कथा। मैं सब कही मोरि मति जथा॥ 7.52.C1
992 राम चरित सत कोटि अपारा। श्रुति सारदा न बरनै पारा॥ 7.52.C2
शिव जी कहते हैं, "हे पार्वती! मैंने तुम्हें यह निर्मल कथा अपनी बुद्धि के अनुसार कही है। रामचन्द्र जी के चरित्र सौ करोड़ अर्थात अपार हैं। वेद और शारदा भी उनका वर्णन करने में असमर्थ हैं।"

993 राम अनंत अनंत गुनानी। जन्म कर्म अनंत नामानी॥ 7.52.C3
994 बिमल कथा हरि पद दायनी। भगति होइ सुनि अनपायनी॥ 7.52.C5
राम अनंत हैं, उनके गुण अनंत हैं, जन्म-कर्म और नाम भी अनंत हैं। यह पवित्र कथा प्रभु के परम पद को देनेवाली है। इसके सुनने से अविचल भक्ति मिलती है।

995 भव सागर चह पार जो पावा। राम कथा ता कहँ दृढ़ नावा॥ 7.53.C3
996 राम कथा गिरिजा मैं बरनी। कलि मल समनि मनोमल हरनी॥ 7.129.C1

जो भवसागर के पार जाना चाहता है, उसके लिए राम-कथा एक दृढ़ नाव की तरह है। शिव जी कहते हैं, "हे गिरिजे! मैंने कलियुग के पापों का नाश और मन के मल को दूर करनेवाली रामकथा का वर्णन किया है।"

997 रघुबंस भूषन चरित यह नर कहहिं सुनहिं जे गावहीं। 7.130.X13
998 कलि मल मनोमल धोइ बिनु श्रम राम धाम सिधावहीं॥ 7.130.X14

जो मनुष्य रघुवंश के भूषण रामचन्द्र जी का यह चरित्र कहते, सुनते और गाते हैं, वे कलियुग के पाप और मन के मल को धोकर बिना किसी परिश्रम के, प्रभु राम के परमधाम को चले जाते हैं।

999 सत पंच चौपाईं मनोहर जानि जो नर उर धरै। 7.130.X15
1000 दारुन अबिद्या पंच जनित बिकार श्री रघुबर हरै॥ 7.130.X16

जो मनुष्य पाँच-सात चौपाइयों को भी मनोहर जानकर अपने हृदय में धारण कर लेता है, उसके भी अविद्याओं से उत्पन्न पाँच प्रकार के दारुण विकारों (काम, क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर) को रामचन्द्र जी हर लेते हैं।

1001 सुंदर सुजान कृपा निधान अनाथ पर कर प्रीति जो। 7.130.X17
1002 सो एक राम अकाम हित निर्बानप्रद सम आन को॥ 7.130.X18

तुलसीदास कहते हैं, "सुन्दर, सुजान, कृपानिधान और जो अनाथों पर प्रेम करते हैं, ऐसे तो मात्र प्रभु राम ही हैं। इनके समान निस्वार्थ हित करने वाला और मोक्ष देने वाला दूसरा कौन है?"

1003 जाकी कृपा लवलेस ते मतिमंद तुलसीदासहूँ। 7.130.X19
1004 पायो परम बिश्रामु राम समान प्रभु नाहीं कहूँ॥ 7.130.X20

जिनकी लेशमात्र कृपा से मुझ मंदबुद्धि तुलसीदास ने भी परम शांति पाई है, उन प्रभु राम के समान कोई और नहीं है।

1005 मो सम दीन न दीन हित तुम्ह समान रघुबीर। 7.130a.D1
1006 अस बिचारि रघुबंस मनि हरहु बिषम भव भीर॥ 7.130a.D2

हे रघुवीर! मेरे समान न तो कोई दीन है और न ही आप के समान कोई दीनों का हित करने वाला है! ऐसा विचारकर हे रघुवंश के मणि! मेरे जन्म-मरण के भयानक दु:ख को हर लीजिए।

1007 कामिहि नारि पिआरि जिमि लोभिहि प्रिय जिमि दाम। 7.130b.D1
1008 तिमि रघुनाथ निरंतर प्रिय लागहु मोहि राम॥ 7.130b.D2

जैसे कामी पुरुष को स्त्री प्रिय लगती है, लोभी को धन प्यारा लगता है, हे रघुनाथ! आप मुझे निरन्तर वैसे ही प्रिय लगते रहें।

श्री रामायण जी की आरती

आरति श्री रामायन जी की । कीरति कलित ललित सिय पी की ॥

गावत ब्रह्मादिक मुनि नारद । बालमीक बिग्यान बिसारद ॥
सुक सनकादि सेष अरु सारद । बरनि पवनसुत कीरति नीकी ॥1 ॥
आरति श्री रामायन जी की.....

गावत बेद पुरान अष्टदस । छओ सास्त्र सब ग्रंथन को रस ॥
मुनि जन धन संतन को सरबस । सार अंस संमत सब ही की ॥2 ॥
आरति श्री रामायन जी की.....

गावत संतत संभु भवानी । अरु घटसंभव मुनि बिग्यानी ॥
ब्यास आदि कबिबर्ज बखानी । कागभुसुंडि गरुड़ के ही की ॥3 ॥
आरति श्री रामायन जी की.....

कलिमल हरनि बिषय रस फीकी । सुभग सिंगार मुक्ति जुबती की ॥
दलन रोग भव मूरि अमी की । तात मात सब बिधि तुलसी की ॥4 ॥
आरति श्री रामायन जी की.....

यह रामायण जी की आरती है जो सीतापति राम जी की सुंदर और मधुर कीर्ति है।

इस आरती को ब्रह्मादि देव, ऋषि नारद, अत्यंत परम विज्ञानी वाल्मीकि, शुकदेव जी, सनकादि, शेषनाग एवं सरस्वती गाते हैं और जिसके यश का वर्णन हनुमान जी ने बड़े सुंदर ढंग से किया है, उन्हीं रामायण जी की आरती हम करते हैं ॥1॥

जिसमें चारों वेद, अट्ठारह पुराण, छहों शास्त्र और सब ग्रंथों का सार भरा है, जो मुनि जनों का धन तथा संतों का सर्वस्व है और जिस में सब का सारांश और सम्मति है, ऐसी हम रामायण जी की आरती करते हैं ॥2॥

जिसको शिव और पार्वती जी नित्य प्रति गाते हैं, जिसका ज्ञानी मुनिश्रेष्ठ अगस्त्य जी और व्यास आदि श्रेष्ठ कवियों ने बखान किया है, और जो कागभुशुण्डी जी और गरुड़ जी के हृदय में सदा निवास करते हैं, ऐसे श्री राम की रामायण की हम आरती करते हैं ॥3॥

यह आरती कलियुग की विषय वासनाओं के रस के स्वाद से हमें मुक्त करने वाली है, मुक्तिरूप युवती का सुंदर शृंगार है अर्थात् बाहरी आडम्बरों से मुक्त कर परम आंतरिक सौंदर्य प्रदान करने वाली है तथा सभी रोगों से मुक्त करने वाली अमृत रूपी बूटी है। तुलसीदास कहते हैं- ऐसी आरती हर प्रकार से मेरी माता-पिता है। अत: हम रामायण जी की आरती करते हैं ॥4॥

श्री राम स्तुति

श्री रामचन्द्र कृपालु भजु मन हरण भवभय दारुणं।
नव कञ्ज लोचन कञ्ज मुख कर कञ्ज पद कञ्जारुणं ॥1॥

कन्दर्प अगणित अमित छवि नव नील नीरद सुन्दरं।
पटपीत मानहुँ तड़ित रुचि शुचि नौमि जनक सुतावरं ॥2॥

भजु दीनबन्धु दिनेश दानव दैत्य वंश निकन्दनं।
रघुनन्द आनन्द कन्द कोशल चंद दशरथ नन्दनं ॥3॥

सिर मुकुट कुंडल तिलक चारु उदारु अङ्ग बिभूषणं।
आजानुभुज शर चाप धर संग्राम जित खर दूषणं ॥4॥

इति वदति तुलसीदास शंकर शेष मुनि मन रंजनं।
मम हृदय कंज निवास कुरु कामादि खल दल गंजनं ॥5॥

मनु जाहि राचेउ मिलहि सो बरु सहज सुन्दर साँवरो।
करुना निधान सुजान सीलु सनेहु जानत रावरो ॥6॥

एहि भाँति गौरि असीस सुनि सिय सहित हियँ हरषीं अली।
तुलसी भवानिहि पूजि पुनि पुनि मुदित मन मन्दिर चली ॥7॥

जानि गौरि अनुकूल सिय हिय हरषु न जाइ कहि।
मंजुल मंगल मूल बाम अङ्ग फरकन लगे ॥

॥ सियावर रामचंद्र जी की जय॥

हे मन! कृपालु श्री रामचन्द्र जी का भजन कर। वे संसार के जन्म-मरण रूपी दारुण भय को दूर करने वाले हैं। उनके नेत्र नव-विकसित कमल के समान हैं। मुख-हाथ और चरण भी लाल कमल के सदृश हैं ॥1॥

उनके सौन्दर्य की छटा अगणित कामदेवों से बढ़कर है। उनका शरीर नवीन नील-सजल मेघ जैसा सुन्दर वर्ण है। पीताम्बर मेघरूप शरीर मानो बिजली के समान चमक रहा है। राजा जनक की पुत्री सीतापति पावनरूप राम जी को मैं नमस्कार करता हूँ ॥2॥

हे मन! दीनों के बन्धु, सूर्य के समान तेजस्वी, दानव और दैत्यों के वंश का समूल नाश करने वाले, आनन्दकन्द कोशल-देशरूपी आकाश में निर्मल चन्द्रमा के समान दशरथनन्दन राम का भजन कर ॥3॥

उनके मस्तक पर रत्नजड़ित मुकुट, कानों में कुण्डल, भाल पर तिलक, और प्रत्येक अंग में सुन्दर आभूषण सुशोभित हो रहे हैं। उनकी भुजाएँ घुटनों तक लम्बी हैं। वे धनुष-बाण लिये हुए हैं, उन्होंने संग्राम में खर-दूषण को जीत लिया है ॥4॥

वे शिव जी, शेष और मुनियों के मन को प्रसन्न करने वाले और काम, क्रोध, लोभादि शत्रुओं का नाश करने वाले हैं। तुलसीदास जी प्रार्थना करते हैं कि वे रघुनाथ जी मेरे हृदय कमल में सदा निवास करें ॥5॥

गौरी जी सीता जी को कहती हैं- जिसमें तुम्हारा मन अनुरक्त हो गया है, वही स्वभाव से सुन्दर साँवला वर (रामचन्द्र जी) तुमको मिलेगा। वह जो दया का सागर और सुजान (सर्वज्ञ) है, तुम्हारे शील और स्नेह को जानता है ॥6॥

इस प्रकार गौरी जी का आशीर्वाद सुनकर जानकी जी समेत सभी सखियाँ हृदय मे हर्षित हुईं। तुलसीदास जी कहते हैं- भवानी जी को बार-बार पूजकर सीता जी प्रसन्न मन से राजमहल को लौट चलीं ॥7॥

गौरी जी को अनुकूल जानकर सीता जी के हृदय में जो हर्ष हुआ वह कहा नहीं जा सकता। सुन्दर मंगलों के मूल उनके बाँयें अंग फड़कने लगे ॥

पुस्तक में आए नामों की सूची

अंगद : बालि का पुत्र
अगस्ति (अगस्त्य) : एक ऋषि
अच्छकुमारा (अक्षयकुमार) : रावण का एक पुत्र
अज : ब्रह्मा
अत्रि : एक ऋषि
अनंत : लक्ष्मण
अनुसुइया (अनुसूया) : अत्रि की पत्नी
अवध : अयोध्या, राम का जन्मस्थान
अवधपुर : अयोध्या
अवधपुरी : अयोध्या
असोक बन (अशोकवन) : उस वन का नाम जहाँ रावण ने सीता को रखा था
अहल्या : गौतम ऋषि की पत्नी

इँद्रजीता (इंद्रजीत) : मेघनाद
इंदिरा : विष्णु पत्नी लक्ष्मी
इंदु : चन्द्रमा
इंद्रजित (इंद्रजीत) : मेघनाद
ईसा (ईश) : शिव
उमा : पार्वती

कपटमृग : कपट का हिरन मारीच
कपिराई (कपिराय) : कपिराज, वानरों के राजा, सुग्रीव
कपीस (कपीश) : सुग्रीव, हनुमान
कुंभकरन (कुम्भकर्ण) : रावण का छोटा भाई
कुंभज : अगस्त्य ऋषि

कुस (कुश) : सीता-राम के ज्येष्ठ पुत्र
केवट : एक नाविक जिसने राम को गंगा पार कराई
केवटु (केवट) : केवट
कैकई (कैकेयी) : दशरथ की कनिष्ठ पत्नी; भरत की माता
कैकयसुता (केकयसुता) : कैकेयी
कोसलपति : राम
कोसलपुर : कोसल की राजधानी अयोध्या
कोसला (कोसल) : एक देश का नाम जहाँ दशरथ का राज्य था
कोसलाधीस (कोसलाधीश) : राम
कोसलाधीसा (कोसलाधीश) : राम
कोसलेस (कोसलेश) : कोसल देश के राजा; दशरथ, राम
कौसल्या : दशरथ की प्रथम पत्नी; राम की माता
कौसिक (कौशिक) : विश्वामित्र

खगेस (खगेश) : पक्षियों के स्वामी और भगवान विष्णु के वाहन गरुड़
खर : एक राक्षस
खरदूषन (खर-दूषण) : खर और दूषण नाम के दो राक्षस
खरारी (खरारि) : खर राक्षस के शत्रु (राम)

गन नायक (गणनायक) : गणेश
गनपति (गणपति) : गणेश
गनेसु (गणेश) : शिव और पार्वती के पुत्र, प्रथम पूजा के अधिकारी देव
गाधितनय : गाधि के पुत्र विश्वामित्र
गिरिजा : पार्वती
गिरिबरराज (गिरिवरराज) : हिमाचल पर्वत
गीधपति (गिद्धपति) : जटायु
गीधराज (गिद्धराज) : जटायु

गुहँ (गुह) : ऋंगवेरपुर के राजा
गोदावरी : एक नदी जिसके तट पर पंचवटी नामक स्थान में राम ने आश्रम बनाया
गौतम : एक ऋषि
गौरि (गौरी) : पार्वती

चतुरानन : ब्रह्मा
चित्रकूट : एक पर्वत जहाँ राम ने निवास किया
चूड़ामनि (चूड़ामणि) : सिर पर पहनने का गहना जो सीता जी ने हनुमान को दिया
छीरसागर (क्षीरसागर) : भगवान विष्णु एवं देवी लक्ष्मी का निवास स्थान
जटायू (जटायु) : एक गिद्ध जिसने सीता को रावण से बचाने के लिए उससे युद्ध किया और अपने प्राण दे दिए
जनक : सीता के पिता का नाम
जनकसुता : सीता
जनकु (जनक) : जनक
जानकी : सीता
जामवंत : ऋक्ष प्रजाति के राजा, राम की सेना में अनुभवी योद्धा एवं सलाहकार

ताड़का : एक राक्षसी का नाम
तुलसिदास (तुलसीदास) : रामचरितमानस के रचयिता
तुलसी (तुलसीदास) : तुलसीदास
त्रिकूट : तीन पर्वतों का समूह जिन पर लंका बसी हुई थी
त्रिपुरारि : शिव
त्रिसिरा (त्रिशिरा) : एक राक्षस
त्रिसिरारि (त्रिशिरारि) : त्रिशिरा के शत्रु राम

दंडक बन (दंडक वन) : जिस वन में पंचवटी था और राम ने निवास किया
दसकंठ : रावण

दसकंध : रावण
दसकंधर : रावण
दसमुख : रावण
दसरथ (दशरथ) : राम के पिता
दसरथु (दसरथ) : दशरथ
दससीसा (दससीस) : रावण
दसानन : रावण
दिग्गज : दिशाओं के हाथी
दूषन (दूषण) : एक राक्षस

नंदिगावँ (नन्दिग्राम) : अयोध्या के निकट एक स्थान जहाँ भरत ने राम बनवास के समय 14 वर्ष निवास किया
नभगेस (नभगेश) : गरुड़
नल : विश्वकर्मा के वानर पुत्र जिन्होंने अपने भाई नील के साथ मिलकर समुद्र पर पुल बनाया
नारदादि : नारद आदि (ऋषि)
नील : विश्वकर्मा के वानर पुत्र जिन्होंने अपने भाई नल के साथ मिलकर समुद्र पर पुल बनाया

पंचबटी (पंचवटी) : गोदावरी के तट पर एक स्थान जहाँ राम ने आश्रम बनाया, यहीं से रावण ने सीता का हरण किया
पंपा : एक सरोवर का नाम
परसुधर (परशुराम) : विष्णु के छठे अवतार
परसुराम (परशुराम) : परशुराम
पवनकुमार : हनुमान
पवनकुमारा (पवनकुमार) : हनुमान
पवनतनय : हनुमान

पवनसुत : हनुमान
पुरारि : त्रिपुरारि, शिव
प्रबरषन (प्रवर्षण) : एक पर्वत का नाम
प्रभंजन : पवन
प्रभंजनसुत : हनुमान
प्रयाग : तीर्थस्थान जहाँ गंगा, यमुना और सरस्वती का संगम माना जाता है
प्रयागा : प्रयाग

फनीस (फणीश) : शेष
बसिष्ट (वसिष्ठ) : एक ऋषि, राम के गुरु, अयोध्या के राजगुरु
बसिष्ठ (वसिष्ठ) : वसिष्ठ
बामदेव (वामदेव) : एक ऋषि
बालमीकि (वाल्मीकि) : आदिकवि जिन्होंने रामायण की रचना की
बालि : किष्किन्धा का राजा, सुग्रीव का बड़ा भाई, अंगद का पिता
बालिकुमारा (बालिकुमार) : अंगद
बालितनय : अंगद
बाली (बालि) : बालि
बिदेह नगर (विदेह नगर) : जनकपुर
बिभीषन (विभीषण) : रावण के छोटे भाई जो राम भक्त थे
बिभीषनु (विभीषण) : विभीषण
बिरंचि : ब्रह्मा
बिराध (विराध) : एक राक्षस
बिस्वामित्र (विश्वामित्र) : एक ऋषि जो राम को अपने आश्रम की सुरक्षा के लिए साथ ले गए
बीरघातिनी (वीरघातिनी) : एक शस्त्र का नाम
बैदेही (वैदेही) : सीता
बैनतेय (वैनतेय) : गरुड़

ब्रह्म : परम सत्य, जगत का सार, परम तत्व
ब्रह्मा : सृष्टि के सर्जक

भरत : कैकेयी के पुत्र
भरतु (भरत) : भरत
भरद्वाज : एक ऋषि
भवानी : पार्वती
भुसुंडि (काकभुशुण्डि) : कौवे के रूप में राम-भक्त जिन्होंने गरुड़ को राम कथा सुनाई
भृगुपति : परशुराम
भौम : मंगलवार

मंथरा : कैकेयी की दासी
मंदाकिनी : एक नदी का नाम जिसके किनारे चित्रकूट में राम ने आश्रम बनाया
मंदोदरीं : रावण की पत्नी मंदोदरी ने
मधुमासा (मधुमास) : चैत्र मास
मयन : कामदेव
महेस (महेश) : शिव
मारीच : एक राक्षस; ताड़का का पुत्र, रावण का मामा
मारीचा (मारीच) : मारीच
मारुतसुत : हनुमान
मिथिलापति : राजा जनक
मिथिलेसू (मिथिलेश) : मिथिला के राजा, जनक
मेघनाद : रावण का पुत्र
मैनाक : एक पर्वत जो समुद्र के भीतर रहता था

रघुकुल नाथ : राम
रघुकुलभानु : राम
रघुनायक : राम
रघुपति : राम
रघुबर (रघुवर) : रघुवंशियों में श्रेष्ठ, राम
रघुबीरु (रघुवीर) : राम
रघुराई (रघुराय) : राम
रमानिवासा (रमानिवास) : राम
रमापति (राम) : राम
राम : विष्णु के अवतार, रामायण के नायक
रामचंद (रामचंद्र) : राम
रामचरितमानस : तुलसीदास कृत राम के जीवन पर लिखा गया महाकाव्य
रामा (राम) : राम
रामु (राम) : राम
रामेस्वर (रामेश्वर) : शिव लिंग जिसकी स्थापना राम ने की
रावन (रावण) : लंका का राजा, राम से शत्रुता के कारण उसका वध हुआ
रावनु (रावण) : रावण
राहू (राहु) : एक ग्रह जो चंद्रमा को ढक देता है
रिपुदमनु (शत्रुघ्न) : शत्रुघ्न
रिष्यमूक (ऋष्यमूक) : एक पर्वत जहाँ सुग्रीव निवास करते थे
रीछपति : रीछों के राजा, जामवंत
रीछेसा (रीछेश) : रीछों के राजा, जामवंत

लंका : एक द्वीप जहाँ रावण शासन करता था
लंकापति : रावण, विभीषण
लंकिनी : रावण की द्वारपालिका
लंकेस (लंकेश) : लंका का राजा, रावण, विभीषण

लखन (लक्ष्मण) : दशरथ के पुत्र, सुमित्रा के बड़े पुत्र, राम के छोटे भाई
लखनु (लक्ष्मण) : लक्ष्मण
लछिमन (लक्ष्मण) : लक्ष्मण
लव : सीता-राम के छोटे पुत्र
लिंग : शिवलिंग

श्री : सीता
श्रुति : वेद
षडानन : शिव जी बड़े पुत्र कार्तिकेय जिन्होंने राक्षस तारकासुर का वध किया
संकर (शंकर) : शिव
संपाती : जटायु के बड़े भाई
संभु (शंभु) : शिव
सृंगबेरपुर (श्रृंगवेरपुर) : एक नगर का नाम जहाँ निषादराज गुह का शासन था
सृंगी (श्रृंगी) : एक ऋषि जिन्होंने राजा दसरथ के लिए पुत्रकामेष्टि यज्ञ कराया, दसरथ की पुत्री के पति
सक्र (शक्र) : इन्द्र
सतानंद (शतानन्द) : राजा जनक के पुरोहित, गौतम और अहल्या के पुत्र
सत्रुहन (शत्रुघ्न) : सुमित्रा के छोटे पुत्र, राम, लक्ष्मण, भरत के छोटे भाई
सबरी (शबरी) : एक भीलनी स्त्री जो राम भक्त थी, जिसको राम ने नवधा भक्ति का उपदेश दिया
सरऊ : सरयू नदी
सहसबाहु (सहस्रबाहु) : हजार भुजाओं वाला एक राजा जिसका वध परशुराम जी ने किया
सारदा (शारदा) : सरस्वती
सिय (सीय) : सीता
सियपति : राम
सिव : शिव

सिवा (शिवा) : पार्वती
सीता : राम की पत्नी
सीय : सीता
सुग्रीव : बालि का छोटा भाई, राम के मित्र
सुग्रीवा (सुग्रीव) : सुग्रीव
सुतीछन (सुतीक्ष्ण) : ऋषि अगस्त्य के एक शिष्य
सुपनखाँ (शूर्पणखा) : रावण की बहन
सुबाहु : एक राक्षस
सुमंत्र : दशरथ के एक मंत्री
सुमंत्रु (सुमंत्र) : सुमंत्र
सुमित्रा : दशरथ की मँझली पत्नी, लक्ष्मण और शत्रुघ्न की माता
सुरपति : इन्द्र
सुरसरि : गंगा
सुरसा : सर्पों की माता
सुरेस (सुरेश) : इन्द्र
सुषेन (सुषेण) : लंका के वैद्य
सुषेना (सुषेण) : सुषेण
सूपनखा (शूर्पणखा) : शूर्पणखा
सौमित्रि : लक्ष्मण

हनुमंत : हनुमान
हनुमंता (हनुमंत) : हनुमान
हनुमान : राम के अनन्य भक्त
हनुमाना (हनुमान) : हनुमान
हनूमान (हनुमान) : हनुमान
हर : शिव
हरि : भगवान, प्रभु, परमात्मा, विष्णु

विद्वानों के शब्द

गोस्वामी तुलसीदास जी द्वारा रचित महाग्रंथ 'श्री रामचरितमानस' अमूल्य रत्नों से परिपूर्ण पुनीत एवं पावन अनन्त कोश है। लेखक डॉ. ओमप्रकाश गुप्ता जी ने अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय देते हुए गागर में सागर भर कर केवल 1008 पंक्तियों में इस महाग्रंथ का संक्षिप्तीकरण किया है। श्री राम के प्रति निष्ठा, भक्ति-भाव और समर्पण का यह अनूठा प्रयास निश्चित रूप से सराहनीय एवं प्रशंसनीय है। यह संस्करण श्री गुप्ता जी की लगन, सेवा-भाव एवं अनथक प्रयासों का जीवंत उदाहरण है। आशा ही नहीं, पूर्ण विश्वास है कि यह 'पवित्र पुस्तक' सभी आयु-समूहों, वर्गों एवं भावी संतति के जीवन को सुसंस्कृत एवं परिष्कृत बनाने में वरदान सिद्ध होगी।
- बलराम ठकराल, ह्यूस्टन, यू.एस.ए.

वाल्मीकि रचित रामायण को जन-जन के मानस में बसाने के लिए तुलसीदास जी ने रची 'रामचरितमानस' जिसमें समाया है जीवन का आदर्श, तत्व, उद्देश्य, लक्ष्य। इस वृहद उद्देश्य तक पहुँचने और समझने की ललक पैदा करने वाली पुस्तक है: 'तुलसी रामायण १००८ पंक्तियों में'- विनीता मिश्रा, लखनऊ

युगद्रष्टा गोस्वामी जी की कृति को लोगों तक पहुँचाने के लिए श्री ओमप्रकाश गुप्ता जी ने बहुत लगन और मेहनत से इस संक्षिप्त मानस को बनाया है। उद्देश्य यही है कि प्रभु राम की कथा सरल तरीके लोगों तक पहुँचे और उनका जीवन सफल हो। इसके लिए वे साधुवाद के पात्र हैं, प्रभु राम उनके इस महान कार्य को सफल करें। - सूरज बालादिन, नीदरलैंड्स

'तुलसी रामायण १००८ पंक्तियों में' पढ़कर बहुत प्रसन्नता हुई। डॉ. ओमप्रकाश जी ने वास्तव में गागर में सागर भर दिया है। संक्षेप में पूर्ण रामायण का सार समाया हुआ है| भारत से दूर विदेश की इस धरती पर उनका यह प्रयास स्तुत्य है, सराहनीय है। आज के इस समय में ऐसी रामायण सबको पढ़नी चाहिए और इसका प्रचार भी करना चाहिए। - डॉ. बिन्देश्वरी अग्रवाल, प्राध्यापक, न्यूयॉर्क यूनिवर्सिटी (भूतपूर्व), यू.एस.ए.

US $5.45
ISBN 978-1-7362088-4-7
9 781736 208847